ॐ

आचार्य श्री भ्रातृचन्द्रसूरि ग्रन्थमाला (२९)

श्रीनेमिचन्द्र सैद्धान्तिक कृत

षड्द्रव्य संग्रह.

मूळ तथा शुद्ध गुजराती भाषान्तर सहित.

मूळना बालबोध कर्ता,

पार्श्वचन्द्रगच्छीय पंडित श्री रामचन्द्रमुनि

प्रकाशन-प्रेरक,

मुनि श्री कनकचन्द्रजी

प्रकाशक,

श्री जैन हठिसींग सरस्वती सभा तरफथी

शाह गोकळदास मगळदास

शामळानी पोळ—अमदावाद

मूळना बाळबोध उपरथी शुद्ध गुजरातीमा

भाषान्तर कर्ता,

शास्त्री गिरिजाशंकर मयाशंकर म्हेता

माडवीनी पोळ—अमदावाद

बिकानेरनिवासी श्रावक तरफथी

भेट

विक्रम स० १९८६

॥ श्रीभ्रातृचन्द्रसूरिषट्पदी ॥

"ग्रहराज आज साँयरो घमी थजा गयो" इत्यनेन रागेण गीयते॥

श्रीभ्रातृचन्द्रसूरिराजमर्थदायक ।
भजस्व हे सखे गुरुं विरागिनायकम् ॥ टेर ॥
ससारमेतमुज्झितु समीहसे यदा ।
मुक्तिं च यातुमिच्छसि प्रमोदतस्तदा श्रीभ्रातृचद्र ।१
प्रवेशमीहसे यदा धियो निवेशने ।
तदा मन प्रसारयेर्ममोपदेशने ॥ श्रीभ्रातृचद्र ॥२॥
करालकाल एप सानिधौ समागत. ।
किमीक्षसे विनश्वर फल हि रागत ॥श्रीभ्रातृचद्र।३॥
विहाय कर्म शास्त्रमर्म धर्मकर्मणे ।
ग्रहीतुमीहसे यदा तदा सुशर्मणे ॥श्रीभ्रातृचद्र॥४॥
श्री पार्श्वचन्द्रसूरिराजवंशदीपक।
सुमुक्तिराजधानिकाध्वन *समीपकम् ।श्रीभ्रातृ० ॥५॥
तप प्रकर्पनिर्जितोरुपञ्चसायक।
महानिदेशनासुधारसप्रपायकम् ॥श्रीभ्रातृचद्र ॥६॥
नित्यानन्देन रचिता भाईलालेन गापिता ।
आचार्यभ्रातृचन्द्रस्य पट्पद्यास्ता मुखाम्बुजे ॥ १॥

---

*समीपयतीति समीपकस्त-मुक्तिराजधान्याः सामीप्यदर्शकम्





निवेदन

मुमुक्षु वाचक ! आ ससार अरघट्ट, अनाद्यनत होइ तत्पतित सर्व जीवात्माने दुर्निष्क्रम जो के अवश्य जणाय छे पण ते विषमातिविषम विलक्षण अरघट्टमाथी अनेकानेक आत्माओ छटकी-सरीने स्वाभीष्ट सुखनिधान स्थाने बीराजी रह्या छे तेओ ए सर्वोत्कृष्ट स्थानना परमातिपरम सुखास्वादनो जे अनुभव अद्यापि करे छे, लोकशिखरे स्थिति करी अनिर्वचनीय परमानदने जे सपूर्ण भोगवे छे अने केवळ स्वानुभवगम्य-अवाच्य लोकोत्तर सतोषने जे सपादन करे छे-ते सर्वनु मूळ, ते महान आत्माओनी सर्वाभिमत अने विश्ववद्य धर्मानुष्ठान तत्परता-धर्मनी अने पोतानी वास्तविक ओतप्रोतता एज छे, नहि के 'धर्म, धर्म' ए प्रकारनी उपलक-वाङ्मात्र जल्पना ! आपणे जो सत्यतापूर्ण मुमुक्षु होइए, ते जगत्पूज्य सिद्धात्माओना निष्पक्षपाती अनुयायीओ होइए अने तत्कथित सर्व सिद्धातोना अटल पूजारी होइए तो नि शक आपणी पण तेज स्थिति-तेज लोकोत्तर स्थाननी योग्यता केम न सभवे ? तेवी अलौकिक योग्यता सपादन करवा ते पुण्यात्माओनी अलौकिक प्रगतिने आपणे अनुसरवु जोइशे, तेमणे रचेला सूत्रो वृत्तिओ-भाष्योनो आपणे पूर्ण अभ्यास करवो जोइशे

ते अभ्यासद्वारा प्राप्त थयेलु ज्ञान मनसा-वचसा-कर्मणा आपणा बाह्य-आभ्यन्तर आचारोमा उतारु जोडशे आपण। आपणा आ यात्मिक मार्गमा विशेष प्रगति करवा जो तैयार थइए तो आपणी सामे ते पूज्य पवित्रात्माओए एटला बधा मोटा मार्गनो खडा करी मूक्या छे के जे द्वारा परम उत्कृष्ट ज्ञान प्राप्त करीए अने ते द्वारा ज्ञाननिष्ठनी उच्च कक्षामा जइ पहोंची शकीए

कदाच कोइ कहे के आधुनिक अति अल्प बलवाळा जीवो, ते ते अतिविस्तृत सूत्रो-वृत्तिओ-चूर्णिओ-भाष्योनु परम दुरवगाह सूक्ष्म रहस्य समजवा घणाज असमर्थ होइ ते ते ज्ञानीकथित सिद्धांतोनु अध्ययन करवा अल्प संख्यामाज बहार आवे छे अने बीजा केटलाक अतिशय निर्बळ जीवो त ते सिद्धांतग्रंथोनो अभ्यास करवा आतरिक उत्कट इच्छा-वाळा होय छे छता ते ते ग्रथोनी विषमता जोइ नासीपास थाय छे तेनु केम? आ कथननो उत्तर अतिसरल छे ते ते सैद्धातिक ग्रंथो भले कदाच दुरवगाह होय ता पण ते ते ग्रथोमा रहेलु दिव्य ज्ञान आपणा पूर्वाचार्योए बीजा नाना ग्रंथोमा सरलता अने सुगमतापूर्वक आपणी समक्ष उतारी आपेलु छे, जेनो आ एकज नमुनो जुओ-' श्री नेमिचन्द्र सैद्धान्तिककृत षड्द्रव्यसग्रह ' आ अपूर्व ग्रथ, जैन दर्शनना मुख्य सिद्धातने खरेखर सरळता अने सुगमता पूर्वक समजावे छे तेमा पण ते ग्रन्थ उपर श्री पार्श्वचन्द्रगच्छीय श्री

रामचन्द्र मुनीश्वरे बाल जीवोना उपकारार्थे सुंदर बालबोध लखो घणोज उपकार कर्यो छे अने जैनधर्मना अनुपम सिद्धांतनु प्रकटीकरण करी अभ्यासी मुमुक्षुने मार्गदृष्टानुं काम करी बताव्यु छे आ ग्रन्थ उपर बालबोधकार श्री रामचद्र मुनि, 'षड्द्रव्यसग्रह ग्रन्थनो अभ्यास करवा भलामण करता आ प्रमाणे लखे छे –

" न वेत्ति द्रव्याणि जिनोदितानि
स नैव जैन खलु मूढचेतन ॥
तं द्रव्यबोधाय पठतु सादरा
श्री नेमिचन्द्रोदितद्रव्यसंग्रहम् ॥१॥

जे मनुष्य जिन भगवाने कहेला जीव–अजीवादि द्रव्योने जाणतो नथी ते जैनज्ञ नथी केमके ते मूढचेतन छे– जीव–अजीवादि द्रव्यो समजवामा मूढ छे–अज्ञान छे, माटे जीवादि द्रव्योनु ज्ञान जो करवु होय तो श्री नेमिचद्रकृत द्रव्य सग्रहनो खतथी अभ्यास करवो जोइए "

द्रव्यसग्रह ग्रथना मूळ कर्ता श्री नेमिचन्द्र सैद्धान्तिक, क्यारे कया प्रदेशमा थया ते कइ मळी शकतु नथी पण द्रव्य-सग्रह उपर बालबोध करी महान उपकार करनार मुनि श्री रामचद्रनो समय तो तेमणेज आ ग्रथना आदि–अतमा आपेला आ लखाण उपरथी सहेज समजी शकाय छे. जेमके,—

"श्री पार्श्वचन्द्रसूरिप्रवर्तितगच्छीयोपाध्याय-
श्रीहीरानदचन्द्रगुरुचरणयुगल प्रणतिविषयीकृत्य-
बालानामुपकाराय रामचन्द्रेण भाषया ॥
द्रव्यसंग्रहशास्त्रस्य व्याख्यालेशो वितन्यते ॥१॥

श्री पार्श्वचन्द्रसूरिए प्रवर्तावेला गच्छना उपाध्याय श्री हीरानदचन्द्र गुरुना चरणमा प्रणाम करी हु रामचन्द्र, बाल जीवोना उपकारार्थे भाषामा–बालबोधमा द्रव्यसंग्रह शास्त्रनी अल्प व्याख्या–नानु विवरण रचु छु "

वळी छेवटे ग्रन्थनी अते पण आ प्रमाणे श्लोक तेमणे पोतेज आपेलो छे —

शब्दन्यायागमादिश्रुतसदवगमापा निधीना गुरूणा
हीरानन्देन्दुनाम्ना चरणयुगलयो सेवया सिद्धबोध।
धर्मार्थी रामचन्द्रो मृदुलतरधिया हेतवे बालबोध।
द्रव्यादे संग्रहस्य व्यलिखदवहकं तस्य टीका विलोक्य
॥ १ ॥

'मारा गुरु–नामे श्री उपाध्याय हीरानन्द चन्द्र, व्याकरण शास्त्र, न्यायशास्त्र तथा आगमशास्त्र सबधी उत्तम ज्ञानना समुद्र समान हता अने तेमना चरणयुगलनी सेवाथी मने सर्व प्रकारनु ज्ञान सिद्ध थयु छे धर्मनी इच्छावाळा मे–रामचन्द्रे, अति मृदु बुद्धिवाळा–बाळ जीवोने ज्ञान प्राप्त थाय ते माटे'

द्रव्य सग्रह ग्रन्थनो आ बालबोध, ते ग्रन्थनी टीका जोइ–विचारीने सक्षेपमा लख्यो छे ” ग्रन्थनी आदि–अतमा आपेला तेमना आ लखाण थी सिद्धज थाय छे के, मुनिश्री रामचन्द्र, श्री पार्श्वचन्द्रसूरिप्रवर्तित ‘ पायचन्द ’ गच्छना हता अने तेमनो स्थितिकाळ श्री पार्श्वचन्द्रसूरिना स्थितिकालनो उत्तर काळज लगभग गणाय तेमणे रचेला बालबोध उपरथी जणाय छे के, तेओनी विद्वत्ता तथा आगमज्ञानीता अपूर्व हती द्रव्यसग्रहना मूळ आशयने बराबर लक्ष्यमा लइ दरेक गाथाओ उपर तेमणे सारो प्रकाश पाडयो छे अने आ उत्तम ग्रन्थ तेमना बालबोधथी ज उत्तमोत्तम बनी गयो छे आवा आवा ग्रथो खरेखर अति अल्प मतिवाळा हरकोइने सिद्धातना मार्गदर्शक बने तेमा कइ आश्चर्य नथीज

मुनिश्री रामचन्द्रकृत बालबोधसहित आ षड्द्रव्यसग्रह ग्रन्थनी एक प्रत तथा चोपडो, अमदावाद–शामळानी पोळ–पायचद गच्छना–उपाश्रय ज्ञानभडारमाथी भ्रातृचन्द्रसूरीश्वरना शिष्यप्रवर महाराजश्री जगतचंद्रजी महाराजना प्रशिष्य मुनिश्री कनकचन्द्रजीए शोधी काढयो अने पछी तेमनी प्रेरणाथीज सामान्य सर्व गुर्जर प्रजाने स्पष्ट गुजरातीमा आ ग्रन्थनु ज्ञान मळी शके ते माटे तेमणे आ ग्रन्थना बालबोधनु शुद्ध गुजराती भाषातर करी आपवानु काम मने सोपवामा आव्यु मे आ ग्रन्थना बालबोधने शुद्ध गुजरातीमा लख्यो छे पण बालबोधकर्ताना मूळ आशयने जाळवी राखवा खास लक्ष्य …

"श्री पार्श्वचन्द्रसूरिप्रवर्तितगच्छीयोपाध्याय-
श्रीहीरानंदचन्द्रगुरुचरणयुगलं प्रणतिविषयीकृत्य-
बालानामुपकाराय रामचन्द्रेण भाषया ॥
द्रव्यसंग्रहशास्त्रस्य व्याख्यालेशो वितन्यते ॥१॥

श्री पार्श्वचन्द्रसूरिए प्रवर्तावेला गच्छना उपाध्याय श्री हीरानंदचंद्र गुरुना चरणमां प्रणाम करी हुं रामचन्द्र, बाळजीवोना उपकारार्थे भाषामां–बाळबोधमां द्रव्यसंग्रह शास्त्रनी अल्प व्याख्या–नानु विवरण रचुं छुं "

वळी छेवटे ग्रन्थनी अंते पण आ प्रमाणे श्लोक तेमणे पोतेज आपेलो छे —

शब्दन्यायागमादिश्रुतसदवगमापानिधीना गुरूणा
हीरानन्देन्दुनाम्ना चरणयुगलयो सेवया सिद्धबोध।
धर्मार्थी रामचन्द्रो मृदुलतरधिया हेतवे बालबोध।
द्रव्यादे संग्रहस्य व्यलिखदवहुकं तस्य टीकाविलोक्य
॥ १ ॥

'मारा गुरु–नाम श्री उपाध्याय हीरानन्द चन्द्र, व्याकरण शास्त्र, न्यायशास्त्र तथा आगमशास्त्र संबंधी उत्तम ज्ञानना समुद्र समान हता अने तेमना चरणयुगलनी सेवाथी मने सर्व प्रकारनुं ज्ञान सिद्ध थयुं छे. धर्मनी इच्छावाळा हुं–रामचन्द्रे, मृदु बुद्धिवाळा–बाळ जीवोने ज्ञान प्राप्त थाय ते माटे

द्रव्य सग्रह ग्रन्थनो आ बालबोध, ते ग्रन्थनी टीका जोइ-विचारीने सक्षेपमा लख्यो छे." ग्रन्थनी आदि-अतमा आपेला तेमना आ लखाणथी सिद्धज थाय छे के, मुनिश्री रामचन्द्र, श्री पार्श्वचन्द्रसूरिप्रवर्तित 'पायचन्द' गच्छना हता अने तेमनो स्थितिकाळ श्री पार्श्वचन्द्रसूरिना स्थितिकाळनो उत्तर काळज लगभग गणाय. तेमणे लखेला बालबोध उपरथी जणाय छे के, तेओनी विद्वत्ता तथा आगमशालीता अपूर्व हती. द्रव्यसग्रहना मूळ आशयने बराबर लक्ष्यमा लइ दरेक गाथाओ उपर तेमणे सारो प्रकाश पाडयो छे अने आ उत्तम ग्रन्थ तेमना बालबोधथी ज उत्तमोत्तम बनी शक्यो छे आवा आवा ग्रथो खरेखर अति अल्प मतिवाळा हरकोइने सिद्धातना मार्गदर्शक बने तेमा कइ आश्चर्य नथीज.

मुनिश्री रामचन्द्रकृत बालबोधसहित आ षड्द्रव्य-सग्रह ग्रन्थनी एक प्रत तथा चोपडो, अमदावाद-शामळानी पोळ-पायचद गच्छना-उपाश्रय ज्ञानभडारमाथी भ्रातृचन्द्रसूरीश्वरना शिष्यप्रवर महाराजश्री जयचंद्रजी महाराजना प्रशिष्य मुनिश्री कनकचन्द्रजीए शोधी काढयो अने पछी तेमनी प्रेरणाथीज सामान्य सर्व गुर्जर प्रजाने स्पष्ट गुजरातीमा आ ग्रन्थनु ज्ञान मळी शके ते माटे तेमणे आ ग्रन्थना बालबोधनु शुद्ध गुजराती भाषातर करी आपवानु काम मने सोपवामा आव्यु में आ ग्रन्थना बालबोधने शुद्ध गुजरातीमा लख्यो छे पण बालबोधकर्ताना मूळ आशयने जाळवी राखवा खास लक्ष्य आप्यु

	विषय	गाथा
४०	मोक्षना कारण सम्यक्त्वादि गुणोनु स्वरूप	४१
४१	सम्यग्ज्ञानस्वरूपकथन	४२
४२	सम्यग्दर्शन स्वरूप	४३
४३	छद्मस्थने प्रथम दर्शन अने ते पछी ज्ञान पण केवलीने बन्ने एक साथे	४४
४४	वीतरागचारित्रनु साधन सरागचारित्र	४५
४५	सरागचारित्रसाध्य वीतराग चारित्र	४६
४६	ध्यानप्रकथन	४७
४७	ध्यातानु लक्षण	४८
४८	पदस्थ-पिंडस्थ-रूपस्थ-स्वरूपातीत-ए चार प्रकारना ध्यानपैकी पदस्थ ध्यान	४९
४९	अरिहंतादि पंच परमेष्ठिनु ध्येय स्वरूप	५०
५०	सिद्ध परमेष्ठिनु ध्येय स्वरूप	५१
५१	आचार्य परमेष्ठिनु ध्येय स्वरूप	५२
५२	उपाध्याय परमेष्ठिनु ध्येय स्वरूप	५३
५३	साधु परमेष्ठिनु ध्येय स्वरूप	५४
५४	निश्चयदृष्टिए ध्यान	५५
५५	शुद्धपरिणतिद्वारा निश्चय ध्यान	५६
५६	तप-श्रुत आदि ध्यानसामग्रीनी अवश्य उपादेयता	५७
५७	ग्रंथकर्तानी निरभिमानिता	५८



श्री नेमिचन्द्र सैद्धान्तिककृत

—षड्द्रव्यसंग्रह—

नु

શુદ્ધ ગુજરાતી ભાષાંતર.

મંગલાચરણ.

सूत्र—(गाथा)

जीवमजीवं दव्वं जिणवरवसहेण जेण णिद्दिट्ठं ॥
देविंदविंदवंदं वंदे तं सव्वदा सिरसा ॥ १ ॥

अर्थ.—गणधरादि जिनोमा-केवळी भगवानोमा, जेओ सर्व-श्रेष्ठ छे, जेमणे, चेतनालक्षण जीवद्रव्य तथा अचेतनालक्षण धर्म—अधर्म—काळ—आकाश—पुद्गल—ए पाच प्रकारनु अजीव-द्रव्य दर्शाव्यु छे—कह्यु छे अने जेमने ६४ देवेन्द्रो नित्य वदन करे छे, ते श्री तीर्थंकर देवने नम्र मस्तके हु सर्वदा वदु छु—नमु छु १.

सूत्र—(गाथा)

जीवो उवओगमओ अमुत्ती कत्ता सदेहपरिमाणो॥
भोत्ता ससारत्थो सिद्धो सो विस्ससोड्डगई ॥२॥

अर्थ –जीव–आत्मा उपयोगमय छे–अर्थात् ज्ञानोपयोगमय अने दर्शनोपयोगमय छे, साराश के आत्मा निश्चय नयनी अपेक्षाए शुद्ध ज्ञान–दर्शनोपयोगमय छे अने व्यवहारनी अपेक्षाए क्षायोपशमिक ज्ञानोपयोगमय तथा दर्शनोपयोगमय छे वळी आत्मा अमूर्त छे–मूर्तिमान नथी, जो के, व्यवहारनी अपेक्षाए जीव कर्माधीन होइ मूर्तिमान छे पण निश्चयनी अपेक्षाए जीव अमूर्तज छे वळी जीव कर्ता छे, जो के, निश्चयदृष्टिए आत्मा द्रव्य–कर्म–भावादिनो कर्ता नथीज पण व्यवहार दृष्टिए तेमा कर्तृत्व छे. आत्मा स्वदेहपरिमाण छे, एटले पोताना शरीर जेवडा प्रमाणनो छे, जो के निश्चय अपेक्षाए आत्मा लोकाकाशव्यापी छे तोपण व्यवहारदृष्टिए ते स्वदेहप्रमाण छे आत्मा सुखदु खादिनो भोक्ता छे–कर्मजन्य सुखदु खने भोगवे छे, ते पण व्यवहारदृष्टिएज निश्चयदृष्टिए तो आत्मा सहजसुखामृतनोज भोक्ता छे वळी आत्मा ससारस्थ छे–एटले के, व्यवहारथी द्रव्य–क्षेत्र–काळ–भव–भाव ए पच प्रकार–पुद्गलपरावर्तलक्षण ससारमा स्थिति करनारो छे, पण

निश्चयथी तो आत्मा सिद्ध छे. जो के व्यवहारदृष्टिए राग-द्वेषना परिणामवशात् असिद्ध छे, पण निश्चयदृष्टिए तो ते सिद्ध छे तेमज आत्मा विश्वनी उपर गति करनारो छे-ऊर्ध्व गतिमान छे. जो के व्यवहारथी कर्मसंबंधने लीधे उच-नीच-तिरछी गति करे छे, पण निश्चय अपेक्षाए तेम नथी २

आ बीजी गाथामा जीवद्रव्यनु नव प्रकारे व्याख्यान सामान्यरूपे जणाव्यु छे, तेज नवप्रकारनु विशेष व्याख्यान हवे पछीनी चार गाथाओथी करे छे —

सूत्र--(गाथा)

तिक्काले चदुपाणा इंदियबलमाउ आणपाणो य ॥
ववहारा सो जीवो णिच्छयणयदो दु चेयणा जस्स ॥३॥

(आ गाथामा जीव शब्दनो अर्थ विस्तारथी दर्शाव्यो छ)

अर्थ --भूत, भविष्य ने वर्तमान ए त्रणे काळमा प्राण चार छे पहेलो इन्द्रियप्राण, बीजो बलप्राण, त्रीजो श्वासोच्छ्वास प्राण अने चोथो आयुःप्राण छे. अर्थात् शुद्ध चेतनारूप निश्चयप्राणथी विपरीत एवो जे अशुद्ध चेतनारूप प्राण ते इन्द्रियप्राण छे, अनतवीर्यरूप निश्चयप्राणथी विपरीत एवो जे मनोबल-वचनबल-कायबलरूप प्राण ते बलप्राण छे, अनादि अनत आत्मद्रव्यनी सत्तारूप निश्चयप्राणथी विपरीत सादिसातरूप जे प्राण ते आयु प्राण छे अने अनतसुखरूप निश्चयप्राणथी विपरीत जे अल्पमात्र खेदनिवृत्तिरूप प्राण छे ते

श्वासोच्छ्वास प्राण कहेवाय छे. आ चार व्यवहार प्राणना उत्तर भेद १० छे. जेमके –इन्द्रिय प्राणना पाच भेद छे, बलप्राणना त्रण भेद छे, आयुःप्राण एक छे अने श्वासोच्छ्वास प्राण पण एक छे एम एकदर दश प्राण प्रसिद्ध छे आ प्राणोने व्यवहार नयनी अपेक्षाए भूत, भविष्य तथा वर्तमान कालमा जे धारण करे छे तेने जीव कहेवामा आवे छे, निश्चय नयनी अपेक्षाए शुद्ध चेतनारूप निश्चयप्राणने जे धारण करे छे ते जीव कहेवाय छे ३

उपरनी गाथामा जीवाधिकार कर्यो, हवे उपयोगाधिकार कहेवाय छे –

सूत्र—(गाथा)

उवओगो दुवियप्पो दसणणाणं च दसण चउधा॥
चरकु–अरकु–ओही–दसणमथ केवल णेय ॥४॥

अर्थ—उपयोग बे प्रकारनो छे, एक दर्शनोपयोग अने बीजो ज्ञानोपयोग तेमा दर्शनोपयोग चार प्रकारनो छे, एक चक्षुर्दर्शनोपयोग, बीजो अचक्षुर्दर्शनोपयोग, त्रीजो अवधिदर्शनोपयोग अने चोथो केवल दर्शनोपयोग जाणवो आ चार प्रकारना दर्शनोपयोगनु स्पष्टीकरण आ प्रमाणे छे – नेत्रद्वारा जे दर्शन-ज्ञान ते चक्षुर्दर्शनोपयोग छे, नेत्र सिवायनी बीजी चार इन्द्रियोद्वारा जे ज्ञान ते अचक्षुर्दर्शनोपयोग छे अने अवधिदर्शनावरणना क्षयोपशमथी अवधि-मर्यादा

प्रमाणमा जे दर्शन-ज्ञान ते अवधिदर्शनोपयोग छे. आ त्रण दर्शनोपयोगोने क्षायोपशमिक दर्शनोपयोग कहेवामा आवे छे जे लोकालोक पदार्थनु दर्शन-ज्ञान ते चोथो केवळ दर्शनोपयोग छे आ चोथा दर्शनोपयोगने क्षायिक दर्शनोपयोग कहेवामा आवे छे. ४

उपयोगना बे प्रकारपैकी दर्शनोपयोगनु स्वरूप कह्यु, हवे ज्ञानोपयोगनु स्वरूप कहे छेः—

सूत्र—(गाथा)

णाणं अट्ठवियप्पं मदिसुदओहीअणाणणाणाणि॥
मणपज्जवकेवलमवि पच्चक्खपरोक्खभेय च ॥५॥

अर्थ —ज्ञानना (ज्ञानोपयोगना) आठ भेद छे. मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञान, विभगज्ञान, मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन.पर्यवज्ञान तथा केवळज्ञान-एम आठ भेद छे आ आठ प्रकारना ज्ञानपैकी केटलाक प्रत्यक्ष छे अने केटलाक अप्रत्यक्ष छे, एटले के मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञान, मतिज्ञान तथा श्रुतज्ञान-ए चार परोक्ष कहेवाय छे. जो के नेत्रादि इन्द्रियोद्वारा उत्पन्न थनार मतिज्ञान व्यवहार दृष्टिए प्रत्यक्ष छे तो पण निश्चय दृष्टिए ते परोक्ष छे. विभगज्ञान, अवधिज्ञान तथा मन पर्यवज्ञान-ए त्रण ज्ञान एकदेश प्रत्यक्ष कहेवाय छे अने केवलज्ञान सपूर्ण प्रत्यक्ष कहेवाय छे आ आठ भेद पैकी त्रण अज्ञान तथा चार ज्ञान ते क्षायोपशमिक छे अने केवळज्ञान

क्षायिक छे. तेमज त्रण अज्ञान ते मिथ्यादृष्टिने उत्पन्न थाय छे अने बाकीना सर्व ज्ञान सम्यग्दृष्टिने उत्पन्न थाय छे.

सूत्र--(गाथा)

अट्ठचउणाणदंसणसामण्ण जीवलक्खणं भणिय ।
ववहारा सुद्धणया सुद्ध पुण दंसणं णाणं ॥६॥

अर्थ –एरीते व्यवहारदृष्टिए जीवनु सामान्य लक्षण कहेवामां आव्यु के जीव–आत्मद्रव्य, पूर्वोक्त आठ ज्ञानमय छे- अर्थात् व्यवहार नयनी अपेक्षाए आत्मा, आठ प्रकारना ज्ञान मय तथा चार प्रकारना दर्शनमय छे पण शुद्ध नय एटले निश्चय नयनी अपेक्षाए आत्मा शुद्ध दर्शन–केवल दर्शन, शुद्ध ज्ञान–केवल ज्ञानमय छे ६

'आत्मा उपयोगमय छे' ए वात कही, हवे आत्मानु अमूर्तपणु समजावे छे --

सूत्र--(गाथा)

वन्नरसपंचगंधा दो फासा अट्ठ णिच्छया जीवे ॥
णो संति अमुत्ति तदो ववहारा मुत्ति बंधादो ॥७

अर्थ —धोळो–पीळो लीलो–लाल–काळो ए पांच वर्ण रंग, तीखो–कडवो–तुरो–खाटो–मीठो–ए पांच रस, सुगंध अने दुर्गंध–ए बे गंध तथा उष्ण–शीतळ–सुंवाळ–कर्कश- चिक्कण– रूक्ष–गुरु(भारे)–लघु(हलको)–ए आठ स्पर्श –आ वीस गुणो सहित जे पदार्थ ते मूर्त कहेवाय छे–पौद्गलिक

छे, आ वीस गुणो, निश्चयनयनी अपेक्षाए जीवमा आत्मद्रव्यमा नथी माटे ते अमूर्त छे व्यवहार नयनी अपेक्षाए अनादि एवा आठ प्रकारना कर्मोना बंधथी आत्मा–जीव, जो के मूर्त छे, (पण निश्चयदृष्टिए अमूर्त ज छे) ७

हवे आत्मा, निश्चय नयनी अपेक्षाए–पुद्गल कर्मनो कर्ता नथी पण व्यवहारनये राग–द्वेष–मोहरूप विभाव परिणामने वश थई कर्मनो कर्ता छे, एवा आशयथी कहे छेः–

सूत्र—(गाथा)

पुग्गलकम्मादीण कत्ता ववहारदो दु णिच्छयदो ॥
चेदणकम्माणादा सुद्धणया सुद्धभावाणं ॥ ८ ॥

अर्थ –आत्मा, व्यवहार नयनी अपेक्षाए ज्ञानावरण वगेरे आठ पुद्गल कर्मोनो, (तेमज 'आदि' शब्दथी) औदारिक–वैक्रिय–आहारकरूप नोकर्मनो तथा घटपटादि बाह्यवस्तुनो कर्ता छे, पण निश्चय नयनी अपेक्षाए आत्मा, चेतनकर्मा छे–अर्थात् अशुद्ध निश्चयनी दृष्टिए आत्मा,कर्मसंबंधथी उत्पन्न थनार राग–द्वेष–मोहादि अशुद्ध चेतनारूप भावकर्मोनो कर्ता छे अने शुद्ध निश्चयनी दृष्टिए आत्मा अनंत ज्ञान–सुखादि शुद्ध चेतनारूप शुद्ध भावोनो कर्ता छे. (आ गाथानु अतिय रहस्य ए छे के, शुद्ध चेतना उपादेय छे–ग्राह्य छे अने बीजा सकल भावरूप अशुद्ध चेतना औपाधिक होवाथी हेय छे–त्याज्य छे) ८

आत्मा शुद्ध निश्चय नये सहजानंदस्वरूप अने निर्वि-

कार एवा नित्यसुखनो भोक्ता छे तोपण व्यवहार नये इन्द्रियोथी उत्पन्न थनारा सुख–दुःखनो भोक्ता छे, एवा अभिप्राय ने सूचवे छे –

सूत्र—(गाथा)

ववहारा सुहदुःक पुग्गलकम्मफल पभुजेदि ॥
आदा णिच्छयणयदो चेदणभावो खु आदस्स ॥९॥

अर्थ –व्यवहारनी अपेक्षाए आत्मा, ज्ञानावरणादि आठ प्रकारना पुद्गलकर्मोना फळरूप सुख–दुःखने भोगवे छे, पण निश्चय नयनी अपेक्षाए आत्मानो चेतनभावज छे–एटले निश्चयदृष्टिए आत्मा सदा आनंदस्वरूप एवा सहज सुखामृतनोज भोक्ता छे (तात्पर्य के, अतीन्द्रिय आभ्यंतर सुख उपादेय छे अने इन्द्रियजन्य बाह्य सुख हेय छे.) ९

हवे निश्चयदृष्टिए आत्मा, असंख्यात प्रदेशोवाळो लोकाकाशना प्रदेशना प्रमाणवाळो छे तोपण व्यवहारदृष्टिए स्वदेहप्रमाण छे– पोताने संबंधवाळा शरीरना प्रमाणनो छे, ए वात कहे छे —

सूत्र—(गाथा)

अणुगुरुदेहप्पमाणो उवसंहारप्पिसप्पदो चेदा ॥
असमुहदोववहाराणिच्छयणयदोअसखदेसोवा॥१०॥

अर्थ —चेतनधर्मी आत्मा व्यवहारनी अपेक्षाए, कर्म-

सबंधथी प्राप्त थयेला पोताना नाना मोटा शरीरमा संकोच-धर्मेने तथा विस्तारधर्मेने पामे छे, अने तेथीज ते ते नाना मोटा शरीरमा वेदना आदि सातप्रकारना समुद्घातना अभावे पोते पण नानो मोटो थाय छे (जेम एक दीवो नाना पात्रमा राखेलो होय तो अल्प विस्तारने पामे छे अने मोटा पात्रमा राखेलो होय तो मोटा विस्तारने पामे छे तेम जीव नाना शरीरमा रहेलो होय तो ते शरीर जेवडो नानो बने छे अने मोटा शरीरमा रहेलो होय तो मोटो बने छे

(अहीं प्रसगने लीधे समुद्घातना भेद अने लक्षणो आपवामा आवे छे —समुद्घात सात प्रकारना छे जेमके वेदनासमुद्घात, कषायसमुद्घात, वैक्रियसमुद्घात, मरणातिक समुद्घात, तैजससमुद्घात, आहारकसमुद्घात अने केवली समुद्घात तेओना लक्षणो - पोताने तीव्र वेदना उत्पन्न थता पोताना मूळ शरीरनो त्याग कर्या विना केटलाक आत्मप्रदेश शरीरनी बहार नीकळे ते [१] वेदना समुद्घात कहेवाय छे तीव्र कषायनो उदय थता मूलशरीरनो त्याग कर्या विना शत्रु वगेरेनो नाश करवा आत्मप्रदेशनु शरीरनी बहार नीकळवु ते [२] कषाय समुद्घात कहेवाय छे मूल शरीरनो त्याग कर्या विना कोइ प्रकारनी विकुर्वणा करवा माटे देहथी आत्मप्रदेशनु बहार नीकळवु ते वैक्रिय समुद्घात कहेवाय छे मरणसमये मूल शरीरनो त्याग कर्या विना अमुक कोइ गतिनु आयुष बाध्यु ते स्थानने स्पर्श करवा आत्मप्रदेशनु बहार नीकळ-

'मरणांतिक समुद्घात कहेवाय छे'. तैजस समुद्घातना बे भेद छे एक अशुभ अने बीजो शुभ. जेमके पोताना मनने दुःख उपजावनार एवा कोइने जोइने क्रोधायमान थयेला कोइ मुनि वगेरेना वामस्कंधप्रदेशमांथी सिंदूरना ढग समान लाल रंगनो, बार योजन लांबो, अंगुलना असंख्यभागे मूळ विस्तारवाळो अने एक योजन अंतिम विस्तारवाळो काहलाना (एक जातना वादित्रना) आकारनो कोइ पुरुष बहार नीकळे अने पोताना विरोधीनो नाश करी पोताना मूळ उत्पत्तिस्थान मुनिनी साथे पोते पण भस्म थइ जाय ते अशुभ तैजस समुद्घात कहेवाय छे. तेज प्रमाणे सर्वलोकसमुदायने व्याधि- दुष्काळ वगेरेथी दुःखी थयेलो जोइ कृपापरायण थयेला कोइ महामुनिना शरीरना वामस्कंधप्रदेशमांथी पूर्वोक्तज आकार तथा प्रमाणनो एक पुरुषाकार नीकळी व्याधि-दुष्काळ वगेरेथी लोकोने मुक्त करी, फरी पाछो तेज मुनिना शरीरमां दाखल थाय छे तेने शुभ तैजस समुद्घात कहेवामां आवे छे चौद पूर्वने धारण करनार कोइ मुनि, अमुक कोइ संशय दूर करवा स्फटिक समान उज्वल एक-हाथ प्रमाणनु आहारक शरीर पोताना जमणा स्कंधप्रदेशमांथी काढी ते शरीरद्वारा केवली भगवानना समवसरणमां जाय अने त्यां संशय दूर करी एक अंतर्मुहूर्त समयमां पाछु पोताना मूळ शरीरमां ते शरीरने दाखल करे,ते आहारक समुद्घात कहेवाय छे, अने केवलीना आत्मप्रदेश, दंड-कपाट-मथान-विवर

पूरणपणे परिणमी चौदराजलोकप्रमाणमा जे विस्तार पामे ते केवली समुद्घात कहेवाय छे)

व्यवहार नयनी अपेक्षाए आ सात प्रकारना समुद्घातना समये आत्मा देहथी अधिक विस्तारवाळो थाय छे अने ते समुद्घातना अभाव समये स्वदेहप्रमाणमा रहे छे पण निश्चयनयनी अपेक्षाए तो आत्मा असख्यात लोकाकाश प्रदेश प्रमाणनोज छे (आ गाथानो तात्पर्यार्थ ए छे के, आत्मा देहादिनी ममताथी ससारमा अनेक प्रकारना शरीर धारण करी भमे छे माटे देहादिनी ममता हेय छे अने शुद्ध आत्मभाव उपादेय छे) १०

हवे त्रण गाथाओथी व्यवहार अने निश्चयनी दृष्टिए ससारी जीवनु स्वरूप वर्णवे छे —

सूत्र—(गाथा)

पुढविजलतेउवाउवणप्फदी विविहथावरेंदी ॥
विगतिगचदुपचरका तसजीवा होंति संखादी॥११॥

अर्थः—पृथ्वीकाय, अपकाय, तेजस्काय, वायुकाय अने वनस्पतिकाय–एम अनेक भेदो स्थावर जीवोना छे आ स्थावर जीवोने केवळ एक स्पर्शेन्द्रिय होय छे तेथी तेओ एकेन्द्रिय कहेवाय छे आ सिवाय बे इन्द्रिय, त्रे इंद्रिय, चउरिन्द्रिय तथा पचेन्द्रिय- ए चार जातना जीवो त्रस

छे तेओनी जाति शंख वगेरे छे अर्थात् गुग्वादि जीवो बे इन्द्रिय छे, कुथुवा-कीडी वगेरे तेइन्द्रिय छे, डांस-माखी भमरो वगेरे चउरिन्द्रिय छे अने मनुष्य-पशु वगेरे जीवो पचेन्द्रिय छे. [सारांश ए छे के, स्थावर-त्रसपणारूप विभाव परिणामनो नाश करवा माटे शुद्धात्मभावना विषेज उद्यम क रवो योग्य छे) ¹¹

उपरनी गाथामां जणावेला स्थावर जीव तथा त्र जीवोना विशेष १४ भेद कहे छे —

सूत्र--(गाथा)

समणा अमणा णेया पचिंदिया णिम्मणा परे सव्वे। बादरसुहुमेगेंदी सव्वे पज्जत्त इदराय ॥ १२॥

अर्थ.—पचेन्द्रियना २ भेद छे एक तो मनसहित-समनस्क एटले सन्नी पचेन्द्रिय अने बीजा मनरहित-अमनस्क एटले असन्नी पचेन्द्रिय एम पचेन्द्रिय २ प्रकारना छे ए सिवायना बीजा बे इन्द्रिय, तेइन्द्रिय तथा चउरिन्द्रिय निर्मनस् छे-मनरहित छे-असन्नी छे हवे जे एकेन्द्रिय जीवो छे तेना पण २ भेद छे बादर एकेन्द्रिय-एटले दृष्टिथी जोइ शकाय तेवा एकेन्द्रिय अने बीजा सूक्ष्म एकेन्द्रिय-एटले दृष्टिथी न जोइ शकाय तेवा एकेन्द्रिय अर्थात् सन्नी पचेन्द्रिय, असन्नी पचेन्द्रिय, असन्नी २ इन्द्रिय, असन्नी तेइन्द्रिय, अस न्नी चउरिंद्रिय, बादर एकेन्द्रिय तथा सूक्ष्म एकेन्द्रिय-एम

सात भेदो जाणवा आ साते भेदो पर्याप्त अने अपर्याप्त–ए भेदथी चौद थाय छे जे जातिना जीवो पोतानी जेटली पर्याप्ति होय तेटली पूरी करे ते पर्याप्त जीवो कहेवाय छे अने जेओ पोतानी पर्याप्ति पूरी न करे तेओ अपर्याप्त कहेवाय छे.[१२]

जो के शुद्ध निश्चय नयनी अपेक्षाए जीव, सर्वथा शुद्ध चैतन्यस्वभाव छे तो पण व्यवहारनी अपेक्षाए ससारी जीव १४ मार्गणारूप १४ गुणठाणारूप छे–एवा आशयथी हवे कहे छेः—

सूत्र—(गाथा)

मग्गणगुणठाणेहि चउद्दस तह हवंति असुद्धणया॥
विण्णेया संसारी सव्वे सिध्धा दु सुध्धणया ॥१३॥

अर्थ— व्यवहार नयनी दृष्टिए मार्गणास्थाने करीने तथा गुणस्थाने करीने पण जीवना चौदज भेद थाय छे अने ते मार्गणा तथा गुणस्थानरूप भेदवाळा ते जीवोने ससारीज जाणवा, पण शुद्ध नयनी दृष्टिए तो सर्वे जीवो शुद्ध चिदानद स्वभावज छे (अहीं प्रसगानुसारे चौद मार्गणाओना नाम कहेवामा आवे छेः—चार गतिरूप [१] गतिमार्गणा, पाच इन्द्रियरूप [२] इन्द्रियमार्गणा, छ कायरूप [३] कायमार्गणा, त्रण योगरूप [४] योगमार्गणा, त्रण वेदरूप [५] वेदमार्गणा, चार कषायरूप [६] कषायमार्गणा, आठ ज्ञानरूप [७] ज्ञा . प

[10]संयममार्गणा, चार दर्शनरूप दर्शनमार्गणा, छ लेश्यारूप[11] लेश्यामार्गणा, भव्य-अभव्यरूप [11]भव्यमार्गणा, छ भेदवाळा सम्यक्त्वरूप[12]सम्यक्त्वमार्गणा, सज्ञी असज्ञीरूप [13]सज्ञीमार्गणा आहारक-अनाहारकरूप[14]आहारमार्गणा —आ चौद मार्गणाना मूळ भेद छे. तेना उत्तरभेद ६२ छे चौद गुणस्थानना नाम तो प्रसिद्ध ज छे) १६

हवे आ १४ मी गाथामा पूर्वार्धथी जीवनु सिद्धस्वरूप तथा उत्तरार्धथी ऊर्ध्वगमनस्वभाव कहे छेः —

सूत्र--(गाथा)

णिक्कम्मा अट्ठगुणा किंचूणा चरमदेहदो सिध्धा ॥
लोयग्गठिदा णिच्चा उप्पादवयएहि संजुत्ता ॥१४॥

अर्थ —जीवोनु सिद्धस्वरूप निष्कर्म छे ज्ञानावरणादि आठ कर्मोथी रहित छे अने आठ गुणोवाळु छे—एटले आठ कर्मोना क्षयथी प्राप्त थनारा आठ गुणोवाळु छे—अर्थात् सिद्ध आत्माने ज्ञानावरण कर्मना क्षयथी अनत ज्ञानरूप गुण प्रकटे छे, दर्शनावरणना क्षयथी अनत दर्शन प्रकटे छे, वेदनीय कर्मना क्षयथी अनत सुख प्रकटे छे, मोहनीय कर्मना क्षयथी क्षायिक सम्यक्त्व प्रकटे छे, आयु कर्मना क्षयथी अनत अवगाहना प्रकटे छे, नामकर्मना क्षयथी अमूर्त गुण प्रकटे छे, गोत्र कर्मना क्षयथी अगुरु-लघु गुण प्रकटे छे अने अतराय कर्मना क्षयथी अनत-वीर्य गुण प्रकट थाय छे वळी ते सिद्ध आत्माओ चरम देहथी

एटले अंतिम शरीरथी किंचित् न्यून अवगाहनाने धारण करे छे-एटले के, असख्यात प्रदेशमय पुरुषाकाररूप आत्मस्वरूपने धारण करे छे कारण ए छे के आत्माना प्रदेश, शैलेशीकरणथी नासिका-मुख-उदर-वगेरे विवरोने पूर्ण करे छे तेथी घन बने छे, एटले तेओनी विरलता दूर थाय छे माटेज तेनी अवगाहना चरम शरीरथी किंचित न्यून छे, एम समजवु

हवे अहीं एक प्रश्न छे के, आत्मा निश्चयनयनी अपेक्षाए लोकाकाश प्रदेशना प्रमाणवाळो छे, परतु व्यवहारनी दृष्टिए शरीरनामकर्मना उदयथी ते आत्मा पोते धारण करेला शरीरना प्रमाणनो बने छे-एटले के सकोचधर्म तथा विस्तार धर्म पामी स्वदेहप्रमाणनो बने छे एम कहेवामा आवे छे, पण चौदमा गुणठाणाने अते सर्वथा शरीरना नाश थी ते आत्मा लोकाकाश प्रमाणज होवो जोइए, तो अहीं तो वळी एम कहेवामा आवे छे जे, चरमदेहथी न्यून होय छे-ते केम घटे? आ प्रश्ननो उत्तर ए छे के, आत्मानो सकोच तथा विस्तार केवळ कर्मने आधीन छे. आत्मा केवलीसमुद्घातना समये जे लोकाकाश प्रमाणमा विस्तरे छे ते पण केवळ कर्मनीज सहायथी एम समजवानु छे. जो के, वस्तुतः आत्मा लोकाकाश प्रमाणज छे तोपण कर्मना अभाव समये ते तेटलाज प्रमाणमा विस्तार न पामी शके, आज कारणथी सिद्धावस्था समये जे शरीरथी आत्मा युक्त थाय छे तेज शरीरना प्रमाणथी कइक ओछा प्रमाणमा अवगाहना करे, पण तेथी अधिक अवगा-

इना न पामी शके दृष्टांत तरीके-जेम चार हाथना वस्त्रने कोइ पुरुष सकेडी ले छे त्यारे वस्त्र नानु बनी जाय छे अने विस्तार पमाडे छे त्यारे ते वस्त्र पाछु तेटलाज प्रमाणमा विस्तरे छे-अर्थात् पुरुषना अभावे वस्त्रनो सकोच के विस्तार जेम नथी समजतो तेमज शरीर-कर्मना अभाव समये आत्मानो पण सकोच के विस्तार न होइ शके, पण जे अवस्थामा तेने कर्मे मूक्यो होय तेज अवस्थाए फक्त ओछा प्रमाणमा ते रहे, अस्तु

वळी पण अहीं एक सशय थाय छे के, सिद्धस्वरूप थयेला आत्माने पूर्वना सवधनो त्याग जो आ मनुष्यक्षेत्र-माज थयेलो होय छे तो ते सिद्ध आत्मा लोकना अग्रभाग उपर गति केम करी शके-केवी रीते ते ऊर्ध्वगतिस्वभाव थइ शके? आ सशयने दूर करवा माटे आ गाथाना उत्तरार्द्धथी समजावे छे के, सिद्धस्वरूप ते आत्मा लोकना अग्रभाग उपर आवेली सिद्धशिलानी उपर एक योजनविस्तारना प्रदेशना चोवीसमा भागमा स्थिति करीने रहे छे ते सिद्धशिलारूप लोकना अग्रभागे पहोचवामा आत्मानी ऊर्ध्व गतिना सबधमा अहीं बराबर बध बेसता चार दृष्टांतो आ प्रमाणे आपवामा आवे छे जेम माटीना लेपथी लींपेली एक तुबडी जळमा नाखताज ते माटीना सबधथी जळमा डुबी जाय छे पण ते माटी ज्यारे धोवाइ जाय छे अने तुबडी स्वच्छ थाय छे त्यारे तुरतज आपोआपज जळनी उपर आवीने रहे छे, अथवा जेम एरडानु एक फळ परिपक्व थइ ज्यारे फूटे छे त्यारे तेनी अदर

रहेला वी पातानी मेळेज उचा उछळी नीकळे छे, अथवा अग्निनी शिखा जेम स्वभावथीज उची गति करे छे, अथवा जेम कुभारनो चाक, दडथी फेरव्यो होय त्यारे ते दंड दूर थया पछी पण अमुक समयसुधी तेमनो तेम फर्या करे छे तेम आत्मा पण कर्मना सबधथी दूर थया पछी आपोआपज ऊर्ध्व गतिमान थने छे. जे कर्मे प्रथम आत्माने भमाव्यो होय छे ते कर्म जो के, दूर थइ गयु होय छे तोपण आत्मा कुभारना चाकनी पेठे अमुक समयसुधी एटले सिद्धशिलापर जइ पहोचाय त्यासुधी गतिमान होइ शके छे, आ रीते आत्मानो ऊर्ध्वगतिस्वभाव सिद्ध थाय छे

हवे ते सिद्धात्माविषे उत्पादव्ययध्रौव्यस्वभाव पण कहे छे--ते सिद्धात्मा नित्य छे-एटले तेनु सिद्धस्वरूप कदी मटतुज नथी सकडो कल्पो वीति जाय तोपण ते सिद्धात्मा पोताना सिद्धस्वरूपथी कदी भ्रष्ट थतो नथी, माटे तेनो ध्रौव्य स्वभाव पण सिद्ध थाय छे आ सिद्धात्मा चौदमा गुणठाणामा रहेलो समजवो वळी ते सिद्धात्मा, उत्पादव्ययथी पण युक्त छे अर्थात् उत्पाद एटले उत्पत्ति तथा व्यय एटले नाश-बन्नेथी पण युक्त छे कहेवानो भाव ए छे के, सिद्धात्मा ज्ञानमय छे, तेमज ते सिद्धना ज्ञानविषे सकल ज्ञेय पदार्थना अवभासरूप पर्याय, हानि-वृद्धिरूपे परिणमे छे, एटले के, एक पर्याय उपजे छे त्यारे एक पर्याय विनाश पामे छे-अने तेथीज द्रव्यदृष्टिए ते सिद्धात्मा नित्य छे-ध्रुव छे अने पर्यायदृष्टिए

शाश्वत पण छे आ उत्पाद्-व्यय-ध्रौव्यस्वरूप जेम आत्मद्रव्य मा छे तेज प्रमाणे बीजा द्रव्योमा पण समजवु १४

हवे अजीवद्रव्य वर्णवे छे: कदाच कोइ शका करे के, जीवद्रव्य सर्वथा उपादेय होवाथी ते विषे व्याख्यान करवु ते तो योग्यज गणाय पण अजीवद्रव्य के जे सर्वथा हेय छे तेनु व्याख्यान शा माटे? आना समाधानमा सूत्रकार पोतेज कहे छे –

सूत्र—(गाथा)

अजीओ पुण णेयो पुग्गलधम्मो अहम्मआयास॥
कालो पुग्गलमुत्तो रूवादिगुणो अमुत्तसेसा दु ॥१५

अर्थ —अजीवद्रव्य जो के हेय छे-सर्वथा त्याज्य छे तोपण ते ज्ञेय तो छे ज तेनु पण ज्ञान करवु आवश्यक छेज हेय वस्तु अने उपादेय वस्तु बन्ने अवश्य जाणवीज जोइए, जेथी अजीवद्रव्यनु व्याख्यान करवु ते पण योग्यज छे व्याख्यान विना विशेष ज्ञान न होइ शके, आ कारणथी हवे अजीवद्रव्य कहेवामा आवे छे. आ अजीवद्रव्यना पाच भेद छे. पुद्गल द्रव्य धर्मास्तिकाय द्रव्य, अधर्मास्तिकाय द्रव्य, आकाशास्तिकाय द्रव्य अने काल द्रव्य आ पाचमा पहेलु जे पुद्गलद्रव्य छे तेज के मूर्त छे-मूर्तिमान छे कारण के पाच प्रकारनु रूप-पाच प्रकारनो रस-बे प्रकारनो गध-आठ प्रकारनो स्पर्श-ए वीस गु

णाथी ते युक्त छे अने तेथीज तेने मूर्त कहेवामा आवे छे बाकीना धर्मास्तिकाय वगेरे अजीवद्रव्य अमूर्त छे १५

पुद्गल द्रव्य व्याख्यान —

सूत्र—(गाथा)

सद्दो बधो सुहुमो थूलो सठाणभेदतमछाया ॥
उज्जोदादवसहिया पुग्गलदव्वस्स पज्जाया ॥१६॥

अर्थः—(पुदगलद्रव्य बे प्रकारनु छे एक तो परमाणुरूप शुद्ध पुदगलद्रव्य अने बीजु स्कधपरिणत पुदगलद्रव्य तेमाथी अशुद्ध पुदगलद्रव्यना भेद कहेवामा आवे छे) एक तो शब्द पुदगलद्रव्य ते शब्दना बे भेद छे. एक तो भाषात्मक शब्द अने बीजो भाषात्मक शब्द. तेमाथी भाषात्मक शब्दना पण बे भेद छे एक अक्षरात्मक अने बीजो अनक्षरात्मक तेमानो अक्षरात्मक शब्द सस्कृत-प्राकृत-अपभ्रश-पैशाचिक-मागध-शौरसेन आर्य म्लेच्छ-वगेरे-मनुष्यादिना व्यवहारनु कारण अनेक प्रकारनो छे अनक्षरात्मक शब्द पण बे इन्द्रिय वगेरे तथा तिर्यंच वगेरेना शब्दरूपे जाणवो, तेमज तीर्थंकर भगवाननी वाणीरूप जे दिव्य ध्वनि ते पण अनक्षर शब्दज छे आ अनक्षरात्मक शब्दना वळी बे भेद छे एक तो प्रायोगिक शब्द तथा बीजो वैश्रसिक शब्द प्रायोगिक शब्द पुरुष वगेरेना प्रयत्नथी होय छे, अने ते पण चार

साक्षात् स्थूल छे आ सर्व स्थूलद्रव्य ते पुदगल द्रव्यज छे

हवे सस्थान पुदगलद्रव्य कहे छे'—सस्थान एटले आकृति—आकार ते पण समचोरस—त्रिकोण—चतुष्कोण वगेरे अनेक प्रकारनु छे अने ते ते सर्व सस्थान पुदगलद्रव्यज छे

ते पछी 'भेद'नामनु पुदगलद्रव्य छे जेम घउ-बाजरी वगेरेनो लोट अने घी खाड वगेरे पदार्थो आ सर्व भेद नामनु पुदगल द्रव्यज छे ते पछी 'तम' नामे पुदगलद्रव्य आवे छे. आ तम ते आखना तेजने अटकावनार अधकार नामनो पदार्थ छे अने ते पण पुदगलद्रव्यज छे पछी 'छाया' नामनु पुदगलद्रव्य छे. आ छायाद्रव्य वृक्षादि आश्रित अथवा मनुष्यादिकनी प्रतिछायारूप छे आना पछी 'उद्योत' नामनु पुदगलद्रव्य आवे छे उद्योत एटले चद्रमडलनो के तारादि विमानोनो प्रकाश आ पण पुदगलद्रव्यज छे, अने ते पछी 'आतप' नामे पुदगलद्रव्य छे सूर्यविमान अथवा सूर्यकातमणि वगेरेनो जे आतप ते पण पुदगलद्रव्यज छे ए रीते समस्त पुदगलस्कधने पुदगलद्रव्यना पर्याय जाणवा नेमाना जे परमाणुगत पर्याय छे ते शुद्ध पुदगलपर्याय समजवा अने छ गुणे हानि—वृद्धिरूप परिणामवाळा तथा स्निग्ध—रुक्ष—वगेरे स्पना विभावगुणथी उत्पन्न थनारा जे द्व्यणुकादिस्कध ते अशुद्ध पुदगलपर्याय समजवा १६

धर्मास्तिकाय स्वरूप कथन —

स्रूत्र—(गाथा)

गइपरिणयाण धम्मो पुग्गलजीवाण गमणसहयारी॥
तोय जह मच्छाण अच्छता णेव सो णेइ ॥१७॥

अर्थ —गमनक्रियारूपे परिणाम पामेला पुद्गलद्रव्यने तथा जीवद्रव्यने तेमनी गमनक्रियामा जे सहायकारण छे–साहाय्यदाता छे ते धर्मास्तिकायद्रव्य कहेवाय छे जो के जीव–पुद्गलनी गमनक्रियानु उपादान कारण–मूळ हेतु, जीव पुद्गल पोतेज छ तोपण धर्मास्तिकायरूप असाधारण कारण विना जीव-पुद्गल कदी गमन करी शके नहि जो धर्मास्तिकायनी सहायविनाज जीव–पुद्गल गमन करी शकता होय तो तेओ अलोकमध्ये का नथी जइ शकता ? जीवनी तथा पुद्गलद्रव्यनी शीघ्रगति तो एक समयमा चौद राजलोक सुधीनी कहेवामा आवी छे छता ते अनतशक्तिमान जीवद्रव्य तथा पुद्गलद्रव्य, धर्मास्तिकायरूप सहायिकारणना अभावथीज अलोकमध्ये गति करी शकता नथी आ रीते धर्मास्तिकायद्रव्य, जीव–पुद्गलने गति–सहायदाता छे ए वातने दृढ समजाववा माटे अहीं एक दृष्टात आपे छे –जेम पाणी माछलाने गमन क्रियामा सहायक छे एटले पाणी विना जेम माछलु गमनक्रिया करी शकतु नथी तेम धर्मास्तिकायनी सहायविना जीव–पुद्गलद्रव्य गतिक्रिया करी शके नहि, पण ते जीवद्रव्य तथा पु

दगलद्रव्य एक स्थळे स्थिति करी रह्या होय तो बलात्कारे-जबरजस्तीथी धर्मास्तिकाय तेमने गतिक्रियामान करी शके नहि अर्थात् जीव-पुद्गलद्रव्ये स्वतःज गमनक्रियानो प्रारंभ कर्यो होय त्यारेज धर्मास्तिकाय तेओने सहायक थाय छे. १७

अधर्मास्तिकाय व्याख्यान —

सूत्र—(गाथा)

ठाणजुयाण अहम्मो पुग्गलजीवाण सहयारी ॥
छाया जह पहियाण गच्छंता णेव सो धरइ ॥१८॥

अर्थ —स्वतः-स्वस्वभावे एक स्थळे स्थिति करता जीव-पुद्गल द्रव्यने स्थिति करावावामा जे सहायी छे तेने अधर्मास्तिकाय द्रव्य कहेवामा आवे छे जेम मध्यान्ह समये तापथी अतिदुःखी थयेला मुसाफरोने कोइ स्थळे आराम लेवानी इच्छा तो स्वतःज उदभवेली छे अने तेओना ते इच्छाने मार्गमा आवेली वृक्षादिनी छाया जेम सहायी बने छे तेम जीव-पुगदलद्रव्य पण अधर्मास्तिकायनी सहाय पामी स्थिति करे छे जेम कोइ आसन्नभव्य जीव, पोताना शुद्धात्मभावथीज मुक्त होइ शके छे छता पण अरिहंतादिनी भक्तिरूप बाह्य भावना ते भव्य जीवने व्यवहार दृष्टिए सहायी कारण बने छे तेम पोतानी शक्तिरूप उपादान कारणथीज स्थिति करता जीव-पुदगलने मात्र बाह्य निमित्तथीज अधर्मास्तिकाय सहाय बने

छे, पण ते जीव-पुदगलद्रव्य जो गमन करी रह्या होय तो अधर्मास्तिकाय पोतानी इच्छाथी तेओने अटकावी शके नहि अर्थात् धर्मास्तिकाय, स्थितिकरी रहेला जीव-पुदगल द्रव्यने जेम गमन करावी शके नहि तेम अधर्मास्तिकाय, गमन करता जीव-पुदगल द्रव्यने स्थिति करावी शके नहि. १८

आकाशास्तिकाय स्वरूप कथन —

सूत्र--(गाथा)

अवगासदाणजोग्गं जीवादीणं वियाण आयासं।
जोन्ह लोगागासं अलोगागासमिदि दुविहं ॥१९॥

अर्थ - जीवादि छ द्रव्यने अवकाश आपवानी जे योग्यता धरावे छ-ने ते द्रव्योने जे अवकाश आपे छे ते आकाशद्रव्य जाणवु अहीं एक प्रश्न छे के, एकज जीवद्रव्य असख्यात प्रदेश लोकाकाश प्रमाणनु छे अने तेवा अनतानत जीवद्रव्यो छे, आ जीवद्रव्य करता अनतगणु पुदगलद्रव्य छे, धर्मद्रव्य पण असख्यातप्रदेशी छे, तेमज अधर्मद्रव्य पण असख्यातप्रदेशी छे, तेमज कालद्रव्य पण असख्यातुज छे आ समग्र द्रव्यो एकला लोकाकाशमात्र अवकाश केम पामी शके ? केम तेओ सकीर्णता (सकडामण) न पामे ? आ प्रश्नना उत्तर तरीके एक दृष्टात अहीं कहेवाय छे —जेम एक दीवानी ज्योतिमा अनेक दीवानी ज्योति समाइ जाय छे अथवा मात्र एकज गदीयाणा

जेटला पारानी गोटीमा जेम अनेक मण सोनु समाइ जाय छे उता ते गोटीनु प्रमाण नथी वधतु के नथी घटतु—अवी अमुक कोइ कोइ वस्तुमा शक्ति रहेली होय छे—तेज प्रमाणे आका- शद्रव्यमा पण तेवा प्रकारनी तेनी कोइ शक्तिना सामर्थ्यथी समग्र द्रव्यो विना संकोचे समाइ जाय छे, आवु आकाशद्रव्यनु स्वरूप भगवान जिनेश्वरे वर्णवेलु छे ते आकाशद्रव्य वे प्र कारनु छे. एक लोकाकाश अने बीजु अलोकाकाश जो के, आकाशद्रव्य स्वतःज अमूर्त, अखंड तथा अवयवरहित होवाथी तेना भेद संभवे नहि तोपण औपाधिक भेदनी दृष्टिए आ- काशना बे भेद कहेवामा आव्या छे १९

लोकाकाश-अलोकाकाश विभाग वर्णन—

सूत्र—(गाथा)

धम्माधम्मा कालो पुग्गलजीवा वसंति जावदिए ॥
आयासे सो लोगो तत्तो परदो अलोगुत्ति ॥२०॥

अर्थ —धर्म,अधर्म,काल, पुदगल अने जीव आ पाचद्रव्यो जेटला आकाशप्रदेशमा रहे ते लोकाकाश कहेवाय छे जो के उये द्रव्यो पोतानी शक्तिथी—कोइनी सहाय लीधा विना स्व भावेज स्थिति करी शके छे तोपण व्यवहारदृष्टिए सर्वद्रव्योनो आधार आकाश छे, माटे जे पाचे द्रव्यने आधाररूपे परिणमे छे ते लोकाकाश कहेवाय छे, अने तेथी बीजु अलोकाकाश

कहेवाय छे आ लोकाकाश अनंत प्रदेशरूप छे अने तेमां शुद्ध आकाशप्रदेश विना अन्य कोइ पण द्रव्य नथी. २०

हवे निश्चय तथा व्यवहारनी अपेक्षाए काळद्रव्यनुं स्वरूप कहे छे —

सूत्र—(गाथा)

दव्वपरिवट्टरूवो जो सो कालो हवेइ ववहारो॥
परिणामादीलक्खो वट्टणलक्खो दु परमट्ठो ॥२१॥

अर्थ—जीवद्रव्य अने पुद्गलद्रव्यना नव पुरातन पर्याय वगेरेनी अमुक समयसुधीनी जे स्थिति ते व्यवहार काळद्रव्य कहेवाय छे याद राखवु जोइए के, जीव–पुद्गलद्रव्यना नव पुरातन पर्यायो ते काळद्रव्य नथी पण तेओनी जे स्थिति तेज काळद्रव्य छे कदाच कोइ कहे के, काळद्रव्य अरूपी होवाथी तेने केम जाणी शकाय ? तेना उत्तरमां कहे छे'–जीव–पुद्गलना अनेक प्रकारना जे परिणामो–जेवा के, एक पर्यायथी बीजा पर्यायरूप परिणाम तथा जीव–पुद्गलनी गमनादि क्रिया–तंडुलपचनादि क्रिया–वगेरे परिणामो उपरथी व्यवहार काळद्रव्यने जाणी शकाय छे कहेवानो भाव ए छे के, जीव–पुद्गलना परिणाम तथा क्रिया–ए सर्व कार्य, काळद्रव्यनी सहाय विना कदी होइ शके नहि, अने तेथीज काळद्रव्यने जाणी शकाय छे वळी परधर्म तथा अपरधर्म उपरथी पण काळद्रव्य

जाणी शकाय छे जेने उत्पन्न थये अमुक घणो समय थइ गयो होय ते पर कहेवाय छे अने जेने उत्पन्न थये अमुक अल्प समय थयो होय ते अपर कहेवाय छे जेम पुत्रनी अपेक्षाए पिता पर छे अने पितानी अपेक्षाए पुत्र अपर छे आ पर-अपरनु असाधारण कारण काळविना बीजु कोइ पण नथी, माटे पर-अपरना कारण तरीके पण काळद्रव्यनु अनुमान थइ शके छे.

ए रीते व्यवहारकाळनु स्वरूप दर्शाव्यु, हवे निश्चय काळनु स्वरूप वर्णवे छे.-वर्तनालक्षण जे परमार्थ काळ ते निश्चय काळ छे वर्तना एटले-सर्व प्रकारना द्रव्यो पोतपोताना स्वभावे करी अनेक परिणामने पामे छे अने तेओना ते ते परिणामने समये-एक परिणामथी बीजा परिणामनी उत्पत्तिविषे काळद्रव्यनु जे सहायपणु तेज वर्तना छे अने तेनेज वर्तना-निश्चय काळद्रव्य कहेवामा आवे छे. भावार्थ ए छे के, सर्व प्रकारना द्रव्यो पोतपोताना उपादान कारणथी अनेक प्रकारना परिणामने पामे छे अने षड्गुण हानि-वृद्धिरूप ते ते तेओनी परिणतिनी उत्पत्तिमा काळद्रव्य सहकारी कारण तरीके बने छे काळद्रव्यनी सहाय विना कोइपण द्रव्य कदी परिणमी शके नहि, दृष्टात तरीके-माटीरूप उपादान कारणथी घटरूप कार्य बने छे पण ते घटकार्य पोतानी उत्पत्तिमा कुभारना चाकनी तथा ते चाक फेरववाना दडनी सहकारी कारण तरीके अपेक्षा राखेज छे, ते ते सहकारी कारण विना घटकार्य कदी बनी शकतु

नथी तेम, सर्व द्रव्यो पोतपोताना उपादान कारणथी अनेक परिणामरूपे उत्पन्न थता काळद्रव्यनी सहकारी कारण तरीके अपेक्षा राखेज छे

हवे अहीं एक प्रश्न थाय छे के, समग्र पदार्थ परिणामी छे अने ते ते सर्व द्रव्योना परिणाममा काळद्रव्य सहकारी कारण छे, ए तो समजाय छे पण काळद्रव्यने पोताने पोताना परिणाममा कोण सहकारी कारण छे? आना उत्तरमा कहे छे–जेम आकाशद्रव्य अन्य सर्व द्रव्यने अवकाश आपे छे छता पोताने पण ते पोतेज अवकाश आपे छे तेम काळद्रव्य पण पोतानी परिणामदशामा पोतेज सहकारी कारण बने छे

आ उपरथी वळी पण एक प्रश्न उभो थाय छे के, आकाशद्रव्यनी पेठे काळद्रव्य पण पोतेज पोताना परिणाममा सहकारी कारण बने छे, एम कहेवामा आव्यु, तो जीवद्रव्य तथा पुद्‌गलद्रव्यना गतिपरिणाममा अने स्थितिपरिणाममा धर्मद्रव्य तथा अधर्मद्रव्य सहकारी कारण शा माटे होवा जोइए? कया कारणथी तेओ पण पोतपोताना परिणाममा पोतेज सहकारी कारण न बने? पछी धर्मास्तिकायनु तथा अधर्मास्तिकायनु शु प्रयोजन रहे छे? तेमज सर्व द्रव्योनु सहकारी कारण जे काळद्रव्य तेनु पण शु प्रयोजन छे? आकाश द्रव्यनु पण शु प्रयोजन छे? सर्व कोइ द्रव्य पोतपोताना परिणाममा पोतेज उपादान कारण तथा सहकारी कारण बनी

रहे अने कोइ पण द्रव्यने बीजा कोइ पण द्रव्यनी सहाय जो जरूरी नज रहे तो केवळ एक जीवद्रव्य तथा बीजु पुदगल द्रव्य–ए बेज द्रव्यो निश्चळ रहेशे पण बीजा चार द्रव्योनु अस्तित्वज नहि रहे!! आ वात शु जिनागम विरुद्ध नथी? आ प्रश्नने उत्तर कहे छेः—भगवान वीतराग कदी अन्यथा वाणी नज होय, जिनागममा जे छ द्रव्यो कहेवामा आव्या छे ते सत्यज छे आ वात खात्रीपूर्वक मानवी जोइए के, जिनोक्त समग्र पदार्थ अनुभवप्रत्यक्ष छे. काळद्रव्यना कार्य घडी–आवली वगेरेने जो आपणे प्रत्यक्ष अनुभवीए छीए तो काळ द्रव्यनु नास्तित्व केम स्वीकाराय? तेज प्रमाणे काळ द्रव्यनी पेठे धर्मास्तिकाय वगेरे द्रव्य पण अनुमानादिथी सिद्धज छे. छये द्रव्यनु स्वरूप जे प्रमाणे जिनागममा कह्यु छे ते तेमज छे एमा अन्यथा नथी. जेम धर्मास्तिकाय वगेरे पदार्थो जीव–पुदगलना गत्यादि परिणाममा सहकारी कारण छे तेम काळ द्रव्य पण सर्व द्रव्योनी परिणतिमा सहकारी कारण होइने पोते पोतानी परिणतिमा पण सहकारी कारण छे जिनेश्वर देवे सर्व पदार्थोने अनन्तधर्मात्मक कह्या छे तेथी युक्तिप्रमाण, अनुभवप्रमाण तथा आगमप्रमाणना आधारे जे धर्म जे पदार्थमा कहेवामा आव्या छे ते घटेज छे, माटे काळ द्रव्यने स्वपरपरिणतिमा जे सहकारी कारण कहेल छे ते सप्रमाण छे प्रमाणपूर्वकज कहेवामा आव्यु छे. जेम जीव पोताना स्वरूपनो तथा अन्यना स्वरूपनो प्रकाशक छे तेथी ते स्वपरप्रकाशक

कहेवाय छे तेम काळद्रव्य पण स्वपरपरिणतिनु सहकारी कारण छेज आ रीते निश्चय काळद्रव्य जाणवु, २१

हवे ते निश्चय काळद्रव्यने रहेवानु स्थळ, क्षेत्र तथा कालाणुद्रव्यनी सख्या कहेवामा आवे छे –

सूत्र—(गाथा)

लोयायासपएसे इक्किके जे ठिया हु इक्किक्का ॥
रयणाण रासीमिव ते कालाणुअसखदव्वाणि ॥२२॥

अर्थः—जेम रत्नोना एक ढगमा अनेक सख्यावाळा रत्नो पोतपोतानी जूदी जूदी सत्ताए ढगरूपे एकठा रह्या होय छे तेम, कालाणुद्रव्य लोकाकाशना एक एक प्रदेशमा एक एक परस्पर असम्भ्र–जुदा जूदा रहे छे, तेमज कालना आ अणुओ, असख्यात छे–अर्थात् लोकाकाशना प्रदेश असख्यात छे अने ते एक एक प्रदेशमा कालनो अणु पण एक एक रहेलो छे तेथी काळना अणुओ पण असख्यात छे

हवे अहीं एक प्रश्न थाय छे के, समग्र द्रव्योनी परिणतिमा काळद्रव्य सहकारी कारण छे अने ते काळद्रव्यने रहेवानु क्षेत्र लोकाकाश कहेवामा आवे छे तो अलोकमध्यवर्ती आकाश द्रव्यने सहकारी कोण ? अलोकमध्ये तो कोइ पण द्रव्यनो अभावज छे आना उत्तरमा कहेवामा आवे छे के, लोकाकाश अने अलोकाकाश–आ बन्ने कइ जूदा जूदा खड

नथी, पण ते अभिन्न -अखड दडरूप छे आवा कारणथी लोकाकाशनी परिणतिने सहकारी थतु ते कालद्रव्य, अलोकाकाशनी परिणतिने पण सहकारी होइ शके छे जेम अखड एवा एक दडने कोइए अमुक एक भागमा हलाव्यो होय तो पण सपूर्ण सर्वांगे ते हले छे, तेम कालद्रव्यनी सहकारिकारणता लोकाकाशप्रदेशमा व्याप्त थता तेना अवयवरूप अलोकाकाशमा पण व्यापे छे

वळी पण एक प्रश्न छे के, काल द्रव्य जो समग्र द्रव्योना परिणाममा सहकारी छे तो आत्मानी जे मुक्तिरुप शुद्ध परिणति तेमा पण ते सहकारीकारण होवो जोइए, अने जो एमज होय तो कालद्रव्य पण उपादेयज थयु प्रथम कहेवामा तो एम आव्यु छे के, एक आत्मा विना समग्र द्रव्यो हेय छे, अथवा ज्ञेय छे पण उपादेय तो नथीज, तो अहो काल द्रव्यने उपादेय समजवु के हेय ? आनो उत्तर कहे छे —आत्मानी मुक्तिरूप शुद्धपरिणतिनु कारण वीतराग चारित्र छे वीतराग चारित्ररूप शुद्ध उपयोग जो न होय तो केवल एकलु कालद्रव्य मुक्तिरूप शुद्ध परिणतिनु सहकारी कारण कदी न थइ शके. आवाज कारणथी कालद्रव्य हेय छे पण उपादेय नथी. वास्तविक रीते तो एज योग्य छे जे, भगवान वीतरागे कालद्रव्यादि जे जे अमूर्तद्रव्यो दर्शाव्या छे ते सघळे छद्मस्थ जीवे सदय करवो अघटित छे. ते ते जिनभाषित द्रव्योमा तेना तेना स्वरुपस्थापन निमित्ते जे कइ युक्ति-तर्क वगेरे करवामा आवे ते पण आगमविरुद्ध नज होवा जोइए. वीत-

राग सर्वज्ञ देवे जे जे पदार्थो कह्या छे ते कदी असत्य नथीज, आवो निश्चय करी विवादनो सर्वथा त्याग करवो. केमके विवादथी रागद्वेष उत्पन्न थाय छे अने रागद्वेष संसारवृद्धिनु कारण बने छे. २२

आटला ग्रंथथी षड्द्रव्यनु स्वरूप वर्णव्यु, हवे पांच गाथाओथी पंचास्तिकायनु स्वरूप कहे छे —

सूत्र—(गाथा)

एवं छब्भेयमिदं जीवाजीवप्पभेददो दव्वं ॥
उत्तं कालविजुत्तं णादव्वा पंच अत्थिकाया दु ॥२३॥

अर्थ.—ए प्रमाणे जीव-अजीवभेदथी छ प्रकारनु द्रव्य कहेवामां आव्युं, तेमांथी कालद्रव्यने बाद
कीना जे पांच द्रव्य रहे छे तेने अस्तिकाय
छे, एटले कालद्रव्य सिवायना बीजां सर्व द्रव्यो
कहेवामां आवे छे २३

हवे 'अस्ति'शब्द त अर्थ

संति जदो तेणेदे
काया इव बहुदेसा
अर्थ —जिनवरो

आपणी सत्ताए विद्यमान छे–तेओनी 'नास्ति' कदी काळे थती नथी माटे तेओने 'अस्तिरूप' कहेवामा आवे छे, तेमज कायनी पेठे बहु प्रदेशवाळा छे तेथी 'कायरूप' कहेवाय छे कहेवानो भाव ए छे के, जेम काय–शरीर, बहु पुद्गलप्रदेशरूपथी 'काय' कहेवाय छे तेम जीवादि पाच द्रव्यो पण एक एक द्रव्य अनेक प्रदेशमय छे तेथी 'काय' कहेवाय छे आ रीते जीवादि पाचे पदार्थो, अनादि–अनत-सत्तारूप 'अस्ति' धर्मथी युक्त छे अने बहुप्रदेशमय 'काय' धर्मथी युक्त छे तेथी 'अस्तिकाय' कहेवाय छे, जेमके–जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय अने आकाशास्तिकाय २४

हवे जीवादि द्रव्योमा बहुप्रदेशपणु केवी रीते छे ते वात कहे छे —

सूत्र—(गाथा)

होंति असखा जीवे धम्माधम्मे अणत आगासे॥
मुत्ते तिविह पएसा कालस्सेगो ण तेण सो काउ॥२५॥

अर्थ —जीवद्रव्यने विषे असख्यात प्रदेश छे एटले एक जीवद्रव्य असख्यात प्रदेशमय छे एम समग्र जीवद्रव्य जाणवा तेजप्रमाणे धर्मास्तिकाय तथा अधर्मास्तिकाय पण असख्यात प्रदेशमय छे. आ धर्मास्तिकाय तथा अधर्मास्तिकाय असख्यात प्रदेशमय लोकप्रमाण एक सत्ता धरे छे. आकाशद्रव्यने विषे

अनंत प्रदेश छे–एटले आकाशद्रव्यनी अनंतप्रदेशमय छोका लोक मात्र एक सत्ता छे, मूर्त एवु जे पुद्गलद्रव्य तेमा त्रण प्रकारना प्रदेश छे. एक तो संख्यात पुद्गल परमाणुस्कंधरूप संख्यात प्रदेशी पुद्गलद्रव्य, बीजु असंख्यात परमाणुमयरूप असंख्यात प्रदेशी पुद्गलद्रव्य अने त्रीजु अनंतपरमाणुमय स्कंधरूप अनंतप्रदेशी पुद्गलद्रव्य ए प्रमाणे मूर्तद्रव्य–पुद्गलद्रव्यमा त्रण प्रकारना प्रदेश जाणवा आ पाचे द्रव्यो ए रीते बहुप्रदेशमय छे तेथीज तेओने 'अस्तिकाय' कहेवामा आवे छे पण कालद्रव्य तो मात्र एकज प्रदेशवालु छे–कालाणुरूप कालद्रव्य मात्र एक प्रदेशी छे तेथी ते 'काय' कहेवाय नहि जो के, कालद्रव्यना अणु असंख्यात छे तोपण ते एक एक कालाणु एक बीजा साथे मलीने पोतानी जूदी जूदी सत्ता धरे छे अने समग्र कालाणुरूपे रहे छे, माटेज ते कालद्रव्य बहुप्रदेशी नथी वली समयरूप जे निकृष्ट कालपर्याय छे तेनु उपादान कारण पण एक कालाणुज छे अने ते पण एकप्रदेशीज छे आवा आशयथीज कालद्रव्यने 'काय' कह्यु नथी

जो के पुद्गल परमाणु एकप्रदेशी छे तोपण उपचारे करी पुद्गल काय कहेवाय छे एवा आशयथी कहे छे —

सूत्र—(गाथा)

एयपएसो वि अणू णाणाखंधप्पदेसदो होदि ॥
बहुदेसो उवयारा तेण य कायं भणंति सव्वण्हू ॥२६॥

अर्थ --पुद्गलद्रव्य जो के एक प्रदेशी छे तोपण स

ख्यात प्रदेशी स्कंध, असख्यात प्रदेशी स्कंध, अनन प्रदेशी स्कंध-वगेरे स्कंधना बहुस्कधबहुप्रदेशपणाथी पुदगलद्रव्य बहुप्रदेशी कहेवामा आव्यु छे, अर्थात् निश्चयदृष्टिए पुदगलद्रव्य एक प्रदेशीज छे तोपण उपचार मात्रथी-एटले व्यवहारनी अपेक्षाए तेने बहुप्रदेशी कह्यु छे अने तेथीज सर्वज्ञ भगवाने ते पुदगलद्रव्यने 'पुदगलास्तिकाय' कह्यु छे' हवे अहीं एक प्रश्न छे के, जेम पुदगलद्रव्य परमाणु-द्व्यणुकादि स्कधरूप होइ बहुप्रदेशी कहेवाय छे तेम, कालद्रव्य पण कालाणु-द्व्यणुकादि स्कधरूप बहुप्रदेशी केम न कहेवाय? आ प्रश्ननो उत्तर ए छे के, पुदगलद्रव्यमा स्निग्धता-रूक्षता वगेरे विभाव गुणो छे अने तेथी ते पुदगल परमाणु एकठा मळी द्व्यणुकादि स्कधरूपे परिणमे छे पण कालद्रव्यमा स्निग्धता रूक्षतावगेरे विभाव गुणो नथी अने तेने लीधे ते कालाणु कदी एकठा मळी शके नहि तेमज स्कधरूपे परिणमे नहि, आ कारणथीज कालद्रव्य एक प्रदेशी छे, बहुप्रदेशी नहि २६

प्रदेशस्वरूप कथन —

सूत्र--(गाथा)

जावदिय आयासं अविभागी पुग्गलेण उट्टद्ध ॥
तं खु पदेस जाणे सव्वाणुट्ठाणदाणरिहं ॥ २७ ॥

अर्थः—जेटलु आकाशद्रव्य अविभागी पुदगलपरमाणुथी अवष्टब्ध-आश्रित थाय-रोकाय तेटला आकाशक्षेत्रने

प्रदेश जाणवो एटले के, एक पुद्गल परमाणु जेटला आका शने रोकी रहे तेटला आकाशने एक आकाशप्रदेश जाणवो एम योजो पण समग्र द्रव्यप्रदेशने आकाशप्रदेशसमान जाणवा ए एक आकाशप्रदेश, सर्व पुद्गलपरमाणुने तथा समग्र सूक्ष्म पुद्गलस्कंधने अवकाश आपवानी योग्यता धरावे छे—एवा प्रकारनी ते आकाशप्रदेशनी अवकाशदानशक्ति छे. जो ते-नामा एवा प्रकारनी शक्ति न होय तो अनंतानंत षड्द्रव्यने असंख्यात प्रदेश लोकाकाशमा केम समावी शके? ते आकाश-द्रव्यनु स्वरूप पहेला पण कह्युज छे

हवे अहीं एक शंका थाय छे के, पुद्गलद्रव्य मूर्त होवाथी तेनो परमाणुरूप भेद घटे छे, पण आकाश वगेरे जे अमूर्तद्रव्य छे तेना प्रदेशरूप भेद केम घटे? आ शंकानु स-माधान ए छे के, जेम कोइ बे मुनिओ बेठा छे ते बन्ने मु निओनु बेसवानु क्षेत्र एक कहेवाय के ने जुदा जुदा क्षेत्र क-हेवाय? जो बन्नेनु एक क्षेत्र कहीए तो बन्ने जण एक क्षेत्र मा केम रही शके, ते माटे बन्ने मुनिओना बेसवाना क्षेत्र जूदा जूदाज कहेवा पडशे तेम आकाशादि जे अमूर्तद्रव्योनो भेद कहेवामा आव्यो छे ते पण औपाधिक भेदज समजवो निश्चयदृष्टिए तो कोइ जातनो भेदज नथी

इतिश्री—द्रव्यसंग्रह प्रथमा षड्द्रव्यपंचास्तिकाय प्रतिपादक प्रथम अध्याय समाप्त

हवे जीव-अजीव पुद्गलद्रव्यना पर्याय-आश्रवादि
सात पदार्थ वर्णवे छे —

सूत्र—(गाथा)

आसव-बंधण-संवर-णिज्जर-मोक्खा-सपुण्णपावा जे॥
जीवाजीवविसेसा ते वि समासेण पभणामो ॥२८॥

अर्थः—आश्रव पदार्थ, बंध पदार्थ, संवर पदार्थ, निर्जरा पदार्थ, मोक्ष पदार्थ पुण्य पदार्थ अने पाप पदार्थ आ सात पदार्थो जीवद्रव्य तथा अजीवद्रव्यना विशेष जाणवा तेओ सवने हवे सक्षेपमा कहेवामा आवे छे. आ सात पदार्थोमा जेओ चेतन भाव-ज्ञानरूप भाव छे तेओने जीवद्रव्यना विशेष जाणवा अने जेओ अचेतनभाव-जडभाव छे तेओने अजीव-पुद्गलद्रव्यना विशेष-पर्याय जाणवा

आश्रव पदार्थ स्वरूप कथन —

आसवदि जेण कम्म परिणामो अप्पणो स विण्णेओ॥
भावासवो जिणुत्तो दव्वासवणो परो होदि॥२९॥

अर्थ —आश्रव पदार्थना बे भेद छे एक तो भावाश्रव अने बीजो द्रव्याश्रव तेमानो भावाश्रव ते ए छे के, जेणे करी कर्मपुद्गल आत्मानी समीप आवे एवु आत्मानु जे कोइ प-

रिणाम तेने भावाश्रव जाणवो, एम भगवान जिनेश्वर कहे छे ए सिवाय बीजो द्रव्याश्रव जाणवो आ विषे आगळ कहेवाशे २९

आश्रवना भेद पको भावाश्रवरूप आत्मपरिणामनु विशेष विवरण —

सूत्र—(गाथा)

मिच्छत्ताविरदिपमादजोगा कोधादओ य विण्णेया ॥
पणपणपणदसतियचउ कमसो भेदा दु पुव्वस्स॥३०॥

अर्थ —मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, योग अने क्रोध वगेरे कषायने भावाश्रव जाणवा तेमा पोताना आत्मस्वरूपनी जे विपरीत श्रद्धा ते आभ्यतर मिथ्यात्व छे अने जिन भगवाने कहेला जीवादि पदार्थ उपर जे विपरीत श्रद्धा ते बाह्य मिथ्यात्व छे आ मिथ्यात्वरूप जे आत्मपरिणाम ते भावाश्रव कहेवाय छे तेमज आत्मा, पोताना सहजसुखसुधारसथी विपरीत थइ इन्द्रियाधीन सुखनी जे इच्छा करे ते आभ्यतर अविरति छे अने प्राणातिपातविरमण वगेरे व्रतनो जे सर्वथा अभाव ते बाह्य अविरति छे आ अविरतिरूप जे आत्मपरिणाम ते पण भावाश्रव छे वळी शुद्ध आत्मानुभवथी परिणामनु जे चलन ते आभ्यतर प्रमाद छे अने मूळगुण तथा उत्तरगुणने मलिन करनारा जे परिणाम ते बाह्य प्रमाद छे आ प्रमादरूप आत्म परिणाम पण भावाश्रव छे कर्मपुदगलने ग्रहण करवाने आ-

रमप्रदेशनी जे चचळता ते आभ्यतर योग कहेवाय छे अने मन-वचन-कायानो जे व्यापार ते बाह्य योग कहेवाय छे आ योग-रूप जे आत्मपरिणाम ते पण भावाश्रव कहेवाय छे. तेजप्रमाणे परम उपशममूर्ति-केवळज्ञानादि अनतगुणवाळा पोताना शुद्ध स्वभावने क्षोभकारक जे आत्मपरिणाम ते आभ्यतर क्रोधादि कपाय छे अने कोइ अनिष्ट वस्तुना सवधमा जे क्रूर परिणाम ते बाह्य क्रोधादि कपाय कहेवाय छे आ क्रोधादि कपायरूप जे आत्मपरिणाम ते पण भावाश्रव छे ए रीते भावाश्रवना भेदरूप मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, योग तथा क्रोधादिना पण अनुक्रमे आ प्रमाणे भेद समजवा-मिथ्यात्व, विपरीत मिथ्यात्व, विनयमिथ्यात्व, सशयमिथ्यात्व तथा अज्ञानमिथ्यात्व, अविरतिरूप भावाश्रवना पण पाच भेद छे. जेवा के, हिंसा, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन तथा परिग्रह, प्रमादरूप भावाश्रवना पदर भेद कहेला छे जेवा के चार प्रकारनी विकथा, चार क्रोधादि कपाय, इन्द्रियोना शब्दादि पाच विषयो, निद्राप्रमाद तथा दृष्टिरागप्रमाद-एकदर ए प्रमाणे पदर प्रमाद जाणवा योग भावाश्रवना त्रण भेद छे-मनोयोग, वचनयोग तथा काययोग, अने क्रोधादिकपायरूप भावाश्रव पण चार प्रकारनो छे -जेमके क्रोध, मान, माया तथा लोभ, आ सर्व भावाश्रवनाज भेद जाणवा.३०

हवे द्रव्याश्रव कहे छे —

सूत्र—(गाथा)

णाणावरणादीण जोग जं पुग्गलं समासवदि ॥
दव्वासओ स णेओ अणयभेओ जिणक्खाओ॥३१॥

अर्थ —ज्ञानावरणादि आठ प्रकारना कर्मने योग्य जे पुद्गल-एटले कार्मणशरीरनी निष्पत्तिना कारण जे पुद्गल परमाणुओ-तेओनु जीवप्रदेशने लक्षी जे आगमन ते द्रव्याश्रव जाणवो आ द्रव्याश्रव जिनभाषित होइने अनेक भेदवाळो छे-अर्थात् ज्ञानावरणादि कर्मरूप आठ मूलप्रकृति तथा तेना उत्तरप्रकृतिरूप १४८ भेदोने द्रव्याश्रव कहेवामा आवे छे ३१

बंध पदार्थ व्याख्यान —

सूत्र—(गाथा)

बज्झदि कम्म जेणदु चेदणभावेण भावबधो सो ॥
कम्मादपदेसाण अण्णोण्णपवेसण इयरा ॥३२॥

अर्थ —बंध पदार्थ बे प्रकारनो छे एक तो भावबंध तथा बीजो द्रव्यबंध, तेमानो भावबंध ते ए छे के, चेतन भावी आत्माने राग-द्वेष-मोहरूप अशुद्ध परिणामथी जे कर्म बंधाय छे ते भावबंध कहेवाय छे, सिवाय बीजो द्रव्यबंध ते ए छे के, कर्म पुद्गल तथा आत्मप्रदेशनो जे अन्योन्य प्रवेश-नीरक्षीरन्याय प्रमाणे जे एकत्र संमिलन ते द्रव्यबंध जाणवो ३२

बंधपदार्थना भेद —

सूत्र—(गाथा)

पयडिट्ठिदि अणुभाग-प्पदेसभेदादु चउविधोबंधो ॥
जोगा पयडिपदेसा ठिदिअणुभागाकसायदो हुंति ॥

अर्थ —प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, अनुभागबंध, तथा प्रदेशबंध-एम चार प्रकारनो बंध पदार्थ छे. तेमां प्रकृतिबंध ते ए छे के, प्रकृति-स्वभावनो जे बंध ते प्रकृतिबंध जाणवो, जेम ज्ञानावरण कर्मप्रकृतिनो पटनी पेठे ज्ञानगुण ढांकवानो स्वभाव छे, दर्शनावरण कर्मप्रकृतिनो दरवान पुरुषनी पेठे दर्शनगुण ढांकी देवानो स्वभाव छे, वेदनीय कर्मप्रकृतिनो मध चोपडेली तरवारनी पेठे सुख-दुःख उपजाववानो स्वभाव छे, मोहनीय कर्मप्रकृतिनो मदिरानी पेठे भ्रम उपजाववानो स्वभाव छे, आयुःकर्मनो हेडनी पेठे आत्माने देहसंबन्धद्वारा रोकी राखवानो स्वभाव छे, नामकर्मनो चित्रकारनी पेठे आत्माने अनेक शरीराकारे परिणामी देवानो स्वभाव छे, गोत्रकर्मनो कुंभारनी पेठे उच्च नीच गोत्रद्वारा मोटा नाना करी देवानो स्वभाव छे अने अंतराय कर्मनो भंडारी पुरुषनी पेठे वस्तुनी प्राप्तिमां विघ्न करवानो स्वभाव छे एम आठ प्रकारनो प्रकृतिना स्वभावना ज बंध ते प्रकृतिबंध कहेवाय छे स्थितिबंध ते ए छे के, जेम बकरी-गाय-भेंस वगेरेना दूधनो मधुर स्वाद ते के अही पहर सुधी तेज स्थितिमां रहे छे तेम, आत्माना

प्रदेशमा कर्म पुद्गलनो सबंध जेटला काळ पर्यंत तेज स्थितिमा रहे छे ते 'स्थिति' कहेवाय छे अने ते स्थितिनो जे बंध ते स्थितिबन्ध कहेवाय छे, अनुभाग बन्ध ते ए छे के, जेम बकरी–गाय–भेंस–वगेरेना दूधमा तर–तमयोगे मधुरता वगेरे शक्तिनो विशेष छे तेम, जीवप्रदेशने विषे रहेला कर्मपुद्गल स्कन्धनो तर–तम–योगे करी ओछा–वधता सुख–दुःख देवानी शक्तिनो जे विशेष छे ते अनुभाग कहेवाय छे अने ते अनुभागना जे बन्ध ते अनुभागबन्ध जाणवो आ अनुभाग बन्धनेज बीजा नामे 'रसबन्ध' कहेवामा आवे छे हवे प्रदेशबन्ध एटले–एक एक जीवप्रदेशमा सिद्ध जीवना अनंतमा भागे अभव्य थकी अनंतगणा अधिक पुद्गल परमाणुओ क्षणे क्षणे बन्धपणे जे परिणमे छे ते प्रदेशबन्ध कहेवाय छे. ए प्रमाणेना बन्ध पदार्थना चार भेदो पैकी प्रकृतिबन्ध तथा प्रदेशबन्ध, मन–वचन–काय–ए त्रणथी थाय छे अने स्थितिबन्ध तथा अनुभागबन्ध, कषायोना परिणामथी उद्भवे छे ३३

संवर पदार्थ व्याख्यान —

सूत्र—(गाथा)

चेदणपरिणामो जो कम्मस्सासवणिरोहणे हेउ ॥

सो भावसवरो खलु दव्वासवरोहणे अण्णो ॥३४॥

अर्थ –संवर पदार्थ पण बे प्रकारनो छे एक भावसंवर तथा बीजो द्रव्यसंवर तेमा शुद्ध ज्ञानानन्दमय परमात्मानी

भावनाथी शुद्ध उपयोगरूप जे चेतनपरिणाम उत्पन्न थाय छे ते शुद्ध चैतन्य परिणाम कहेवाय छे. आ शुद्ध चैतन्य परिणाम, कर्मपुद्गळने जीव प्रदेश समीप आवता अटकाववामा हेतु छे—असाधारण कारण छे—एटले के शुद्ध चैतन्य परिणामना महिमाथी जीव प्रदेशनी समीपे कर्मपुद्गळ आवी शकता नथी, आवा प्रकारनो जे शुद्ध चेतन परिणाम तेने 'भावसवर' कहेवामा आवे छे, अने आ भावसवरद्वारा उत्पन्न थइ जे द्रव्याश्रवनो निरोध करे—कर्मपुद्गलना आगमनने जे अटकावे ते बीजो द्रव्यसवर कहेवाय छे ३४

भावसवरना विशेष भेद कहे छे—

सूत्र—(गाथा)

वदसमिदीगुत्तीओ धम्माणुपेहापरीसहजओ य॥
चारित्त बहुभेया णादव्वा भावसवरविसेसा॥६४॥

अर्थ —व्रत, समिति, गुप्ति, धर्म, अनुप्रेक्षा, परीषहजय अने चारित्र इत्यादि भावसवरना विशेष भेद जाणवा आमानु व्रत बे प्रकारनु छे एक निश्चय व्रत तथा बीजु व्यवहार व्रत. तेमा पोताना शुद्धात्म भावनाना बळवडे रागादि अशुद्ध परिणामथी जे निवृत्ति ते निश्चयव्रत कहेवाय छे अने अहिंसादि जे पाच महाव्रत ते व्यवहार व्रत कहेवाय छे. आ व्रतरूप जे परिणाम ते भावसवर छे, तेमज समिति पण बे

प्रकारनी छे एक तो निश्चयसमिति तथा बीजी व्यवहार समिति. तेमा अनंतज्ञानादि विशुद्ध स्वभावनी जे प्राप्ति ते निश्चयसमिति छे अने इर्या–भाषा–एषणा–आदान–निक्षेप–आ पाच प्रकारनी व्यवहार समिति छे आ समिति पण भावसंवर छे. वळी गुप्ति पण बे प्रकारनी छे एक तो निश्चय गुप्ति तथा बीजी व्यवहार गुप्ति तेमा आत्माने सहजानंदस्वभावमा जे गोपवी राखवो ते निश्चयगुप्ति समजवी अने–मन–वचन कायने अशुभ क्रियाओथी जे गोपवी राखवा ते व्यवहार गुप्ति छे. आ गुप्ति पण भावसंवर छे तेजप्रमाणे क्षमादि दश प्रकारनो जे उत्तम यतिधर्म छे ते पण भावसंवर छे अनुप्रेक्षा–एटले अनित्यादि बार भावना ते पण भावसंवर छे अमुक अमुक भावनाओथी बावीस प्रकारना परीषहोनो जे जय करवो ते पण भावसंवर छे

हवे चारित्र शब्दनो अर्थ कहेवाय छे –शुद्धोपयोगरूप रत्नत्रयनी परिणतिनु पोताना शुद्ध आत्मद्रव्यमा जे चरण–स्थापन करवु तेने चारित्र कहेवामा आवे छे आ चारित्रना तर–तमयोगे पाच भेद थाय छे जेमके, पहेलु सामायिक चारित्र सामायिक चारित्र एटले 'सर्व जीव केवळ ज्ञानस्वभाव छे, कोइ पण अधिक–न्यून नथी' एवी जे समता बुद्धि ते सामायिक छे, अथवा पोताना स्वभावनी स्थिरताना बळथी समग्र शुभ–अशुभ सकल्पोनो जे समकाळे त्याग–तेथी जे परमसमाधि ते सामायिक छे, अथवा आत्माना अनुभवना

वळथी राग-द्वेषनी परिणतिनो जे सर्वथा त्याग ते सामायिक छे, अथवा सुख-दुःखना अनुभवप्रसंगे जे संपूर्ण मध्यस्थभाव ते सामायिक छे. आनुं नाम ज सामायिक चारित्र कहेवाय छे. बीजुं छेदोपस्थापनीय चारित्र कहेवाय छे आ छेदोपस्थापनीय चारित्र ते ए छे के आत्मा, समग्र हिंसा-मृषा-अदत्त-मैथुन-परिग्रहथी विराम पामी पांच प्रकारना विकल्पोनो छेद-भेद करी नाखे, रागादिविकल्परूप सावद्य योगथी निवृत्ति पामे अने पोताना शुद्ध स्वरूपमां स्थिति करी निश्चळ थाय ते छेदोपस्थापनीय चारित्र कहेवाय छे, अथवा छेद एटले पोताना व्रतनुं खंडन थतां निज शुद्धात्मानुभवरूप निश्चयप्रायश्चित्तद्वारा अने निश्चयप्रायश्चित्तना साधक प्राणायाम-ध्यान-जप तपरूप व्यवहारप्रायश्चित्तद्वारा पोताना स्वरूपमां आत्माने जे स्थापित करवो, ते छेदोपस्थापनीय चारित्र कहेवाय छे त्रीजुं 'परिहारविशुद्धि' नामनुं चारित्र छे. आ चारित्रनुं स्वरूप ए छे के, मिथ्या रागादि विकल्परूप मेळनो परिहार परित्याग करी आत्मानी जे शुद्धि-निर्मळता ते 'परिहारविशुद्धि' चारित्र कहेवाय छे चोथुं 'सूक्ष्म सपराय' नामनुं चारित्र छे. तेनुं स्वरूप ए छे के, प्रथम मोहनीय कर्मनी २८ प्रकृतिमांथी केवळ एक लोभ प्रकृतिविना बाकीनी २७ प्रकृतिओनो क्षय तथा उपशम थया पछी जे परिणामविशेषथी सूक्ष्म एवी लोभप्रकृतिनो पण क्षय तथा उपशम थइ जाय तेनुं नाम सूक्ष्म सपराय चारित्र कहेवाय छे. हवे पांचमुं 'यथाख्यात' चारित्र कहे छेः—

समग्र मोहनीय प्रकृतिनो क्षय-उपशम थया पछी निजगुणरूप परमस्थिरता लक्षण जे चारित्र प्रकटे छे ते यथाख्यात कहेवाय छे ए प्रमाणे पांच प्रकारना चारित्र कही तेओ कये गुणठाणे प्राप्त थाय छे ते हवे कहे छे.-सामायिक चारित्र अने छेदोपस्थानीय चारित्र प्रमत्त, अप्रमत्त, अपूर्वकरण तथा अनिवृत्तिकरण-ए चार गुणठाणे प्राप्त थाय छे, परिहारविशुद्धि चारित्र प्रमत्त' नामना छट्ठे गुणठाणे तथा 'अप्रमत्त नामना सातमे गुणठाणे प्राप्त थाय छे, सूक्ष्मसंपराय चारित्र 'संपराय'नामना दशमे गुणठाणे प्राप्त थाय छे अने यथाख्यात चारित्र उपशांतमोह, क्षीणमोह, सयोगी केवली अने अयोगी केवली ए चार गुणठाणे प्राप्त थाय छे विरताविरतरूप जे देशचारित्र छे तेनु गुणठाणु 'देशविरति' नामे पांचमु छे अने सकलचारित्रना अभावरूप जे असयत तेना गुणठाणा मिथ्यात्व-सास्वादन-मिश्र-अविरत-ए चार छे ए रीते चारित्रना भेद तथा गुणठाणा कह्या आ सर्व-व्रतादि-चारित्रसुधीना पदार्थोने भावसंवरना विशेष भेद जाणवा ३५

निर्जरा पदार्थ व्याख्यान —

सूत्र—(गाथा)

जह कालेण तवेण य भुत्तरस कम्मपुग्गल जेण ॥
भावेण सडदि णेया तस्सडण चेदिणिज्जरा दुविहा॥

अर्थ.—निर्जरा ने प्रकारनी छे एक भावनिर्जरा तथा

बीजी द्रव्यनिर्जरा. तेमाथी प्रथम भावनिर्जरा कहे छेः–जे कर्म जे काळे पोताना उदयमा आवे–स्वस्वभावे उदीरणा विनाज उदयमा आवे ते 'यथाकाल' कहेवाय छे आ यथाकालथी तथा तपथी कर्मने उदीरीने जेनो रस–सुखदु'खरूप स्वाद भोगवाइ गयो छे एवु कर्मपुदगल, आत्माना विशुद्ध परिणामरूप जे भावथी आत्मप्रदेशमा वळगेलु छता तेथी छुटु पडी जाय–सरी–खरी पडे–एवा प्रकारनो जे शुद्ध आत्मपरिणाम ते 'भावनिर्जरा' कहेवाय छे अने आत्मप्रदेशमा लागेला–वळगेला कर्मपुदगलनु जे सरवु–खरवु तेने 'द्रव्यनिर्जरा' कहेवामा आवे छे.

अहीं निर्जराना संबधमा विशेष समजुती आ प्रमाणे छेः–निर्जरा बे प्रकारनी छे एक सविपाक निर्जरा अने बीजी अविपाक निर्जरा जेम पोताना समयने पामी आंबानु फळ परिपक्व थाय छे तेम कर्म पण पोतानी मेळे पोताना समये उदय पामी निर्जरे–परिपाक दशाने पामे ते सविपाक निर्जरा कहेवाय छे, अने जेनो परिपाक अमुक काळांतरे होय छे तेवा आंबाना फळने अमुक कोइ उपायथी तत्काळ समयविना जेम पकववामा आवे छे तेम, कर्मपुदगलने पण तेना उदय काळविना–परिपाकसमय विना जे महाघोर तपथी उदीरीने–उदयकाळमा आणीने जे कर्मनिर्जरा करवी–कर्मोने खपाववा ते अविपाक निर्जरा कहेवाय छे ए रीते सकाम निर्जराद्वारा तथा अकामनिर्जराद्वारा जेनो फळभोग भोगवायो होय छे तेवा कर्म-

पुद्गलो विशुद्ध परिणामथी जे खरे-परे-खपे ते भावनिर्जरा जाणवी, अने ते निवायनी उपर थहीं मे ते द्रव्यनिर्जरा समजवी.

हवे अहीं एक प्रश्न थाय छे के, सवरपूर्वक ज्ञानवान जे निर्जरा कहेवामां आवी ते सविपाक निर्जरा तो मिथ्या-द्रष्टिने पण होइ शके छे, केवळ सम्यग्दृष्टिनेज होय एवो नियम नथी; तो ते ज्ञानवाननी निर्जरा केम कही शकाय आ प्रश्नो उत्तर ए छे के, मिथ्यात्वीने जो के सविपाक निर्जरा होय छे तोपण ते तेने सवरपूर्वक निर्जरा होती नथी अहीं तो सवरपूर्वक लीधी छे अने ते सवर केवळ ज्ञानीनेज होय छे, अज्ञानीने होय नहि, माटे अज्ञानी जीवनी निर्जरा गणत्रीमां माफक निरर्थक छे. केमके अज्ञानीने अल्प निर्जरा घणा बंध होय तेथी तेनी गणना न करी शकाय ३६

मोक्षपदार्थ व्याख्यान —

सूत्र—(गाथा)

सव्वस्स कम्मणो जो खयहेऊ अप्पणो हु परिणामो॥
णेओ स भावमुक्खो दव्वविमुक्खोय्पकम्मपुहभावो॥

अर्थ —मोक्ष पदार्थना बे भेद छे, एक भावमोक्ष अने बीजो द्रव्यमोक्ष तेमानो भावमोक्ष ते ए छे के, समग्र कर्मोनो जे क्षय-मूळथी विनाश तेनु असाधारण कारण एवु जे आ-आत्मानु परिणाम तेने भावमोक्ष जाणवो, अने द्रव्यमोक्ष ते

छे के, आत्मानो तथा कर्मोनो जे पृथग् भाव-अलग अलग थइ जवु-ते द्रव्यमोक्ष छे आ द्रव्यमोक्ष चौदमा गुणठाणाने अंते होइ शके छे. ३७

पुण्य-पाप पदार्थ व्याख्यान—

सूत्र—(गाथा)

सुहअसुहभावजुत्ता पुण्ण पाप हवन्ति खलु जीवा ॥
सादं सुहाओ णाम गोदं पुण्ण पराणि पाव च ॥३८॥

अर्थ —देवपूजा-गुरुपूजा-यतिपूजा-सुपात्रे दान-सुशीलता-उपवास वगेरे शुभ भावोमा जे रुचि ते पुण्य छे अने ते रुचिवाळो जे जीव ते पुण्यवान छे, तेमज विषय-कषायादि जे विपरीत भावो तेमा जे रुचि ते पाप छे अने ते रुचिवाळो जे जीव ते पापयुक्त छे. कहेवानो भाव ए छे के, शुभभावयुक्त जे जीव ते पुण्यवान छे अने अशुभभावयुक्त जे जीव ते पापी छे. आ पुण्य-पाप पदार्थनु विशेष स्वरूप ए छे के, सातावेदनी-देवमनुष्यादि शुभ आयुष-शुभ नाम कर्मनी जे प्रकृति-शुभ गोत्र-उच्चैर्गोत्र-वगेरे ४२ प्रकृति, ते पुण्य पदार्थ कहेवाय छे अने बीजी एथी विपरीत एवी जे ८२ प्रकृति ते पाप पदार्थ छे.

हवे अहीं एक प्रश्न थाय छे के, सम्यग्दृष्टि जीवने पुण्य तथा पाप-ए बे पदार्थ स्वस्वरूप शुद्ध स्वरूपना घातक होवाथी अवश्य हेयज छे उपादेय तो नथीज, तो पछी सम्यग्दृष्टि जीव अरिहंतादिनी भक्ति वगेरे विशेष पुण्य क्रियाओ शा

माटे करे? आ प्रश्नना उत्तरमां कहे छे के, जेम कोइ भोगी पुरुष परदेश गयो होय त्यारे पोतानी प्रेमपात्र मनोहर पत्नीना वियोगथी क्षीण थइ जाय छे अने ते स्त्रीनु नित्य स्मरण कर्या करे छे, वळी कोइ समये ते स्त्री पासेथी समाचार लाववार कोइ माणस पोतानी पासे आवे छे त्यारे ते स्त्रीना कारणथीज आववार माणसनो घणो घणो आदर-सत्कार करे छे, तेज प्रमाणे सम्यग्दृष्टि जीव पण परम सम्यक्त्वने प्राप्त करी ते सम्यक्त्वना महिमाद्वारा शुद्धात्मस्वरूपनो आस्वाद ले छे-केवळ परोक्षभावेज शुद्धात्मभावनी भावना भावे छे पण चारित्र मोहना उदयथी निर्विकार स्वरूपने प्रत्यक्षपणे पामी शकतो नथी, माटेज निर्दोष-निर्विकार परमात्मा-अरिहंतादि परमेष्ठिनी ते भक्ति करे छे अने शुद्ध आत्मस्वरूपनी प्राप्ति तरफ लक्ष्य राखी, विषय-कषायादि अशुभ भावोने दूर करी परमेष्ठिनी भक्ति वगेरे शुभ सामग्रीद्वारा प्रत्यक्ष निर्विकार स्वरूपने अनुभवे छे. आ रीते तीर्थंकरादिनी भक्तिरूप जे विशिष्ट गुण छे ते तीर्थंकरप्रकृति प्रमुख पुण्यपरंपराथी मुक्तिनु कारण बने छे अने तेथीज सम्यग्दृष्टि जीवने व्यवहारनये तेनु धर्मानुबन्धी पुण्य उपादेय छे, पण मिथ्यात्वीनु जे पुण्य होय छे ते पापानुबन्धी छे अने तेवा पुण्यद्वारा परिणामे केवळ पापनीज उत्पत्ति छे माटे मिथ्यात्वीनु ते पुण्य सर्वथा हेय छे

इतिश्री द्रव्यसंग्रह प्रथमा सप्तपदार्थ-नवतत्व-प्रतिपादक बीजो अध्याय समाप्त

मोक्षमार्ग कथन —

सूत्र—(गाथा)

सम्मद्दंसणणाणं चरणं मोक्खस्स कारणं जाण ॥
ववहारा णिच्छयदो तत्तियमइओ णिओ अप्पा ॥३९

अर्थ.—सम्यग्दर्शन एटले शुद्ध श्रद्धा, सम्यग्ज्ञान एटले संशयादिरहित यथार्थ ज्ञान अने सम्यक्चारित्र एटले शुद्ध वीतराग चारित्र–आ त्रणे रत्नो मोक्षना कारण जाणवा पण याद राखवु जोइए के, आ मोक्षकारणो व्यवहारदृष्टिएज छे, निश्चयदृष्टिए तो ज्ञान–दर्शन–चारित्रमय एवो आत्माज मोक्षनु कारण छे. ३९

हवे ज्ञान-दर्शन-चारित्र ए गुणो अने आत्मद्रव्यनो परस्पर व्याप्यव्यापकभाव सम्बन्ध तथा ज्ञान-दर्शन-चारित्रगुणमय एवा आत्मद्रव्यनी उपादेयता कहे छे—

सूत्र—(गाथा)

रयणत्तयं ण वट्टइ अप्पाणं मुइत्तु अण्णदव्वम्मि ॥
तम्हा तत्तियमइओ होदि हु मोक्खस्स कारणं आदा ॥

अर्थ.—दर्शन, ज्ञान अने चारित्र ए त्रण गुण–रत्नो आत्मद्रव्यने मुकीने अचेतन अन्य पुदगलादि द्रव्योमां कदी रहेता नथी अर्थात् ज्ञानादि गुणो आत्मद्रव्य विना बीजे कदी रहेता नथी, तेमज आत्मा पोते पण ए ज्ञानादि गुणो विना कदी रहेतो नथी तेथी आत्मानो अने ज्ञानादि गुण-

समूहनो व्याप्य-व्यापकभावसबध सिद्ध थाय छे. जेम अग्निनो तथा उष्णतानो व्याप्य-व्यापकभाव सबध छे तेम आत्मानो तथा ज्ञानादि गुणोनो व्याप्य-व्यापकभाव सबध जाणवो, आ रीते ज्ञानादि गुणो तथा आत्मानो परस्पर अभेद छे तेथी आत्मा ज मोक्षनु कारण छे अने तेज उपादेय छे ४०

मोक्षना कारण सम्यक्त्वादि गुणोनु स्वरूपकथन—

सूत्र—(गाथा)

जीवादीसद्दहणं सम्मत्तं रूवमप्पणो तं तु ॥
दुरभिणिवेसविमुक्कं णाणं सम्मं खु होदि सदिजम्हि॥

अर्थ —सर्वज्ञ वीतरागदेवे कहेला जीवादि समग्र पदार्थो विषे चलबुद्धि-मलिनबुद्धिरहित एवी जे शुद्ध श्रद्धा धारण करवी-एटले 'वीतरागे कहेला समग्र जीवादि पदार्थो कदी असत्य नज होय' आवी जे निश्चयबुद्धि तेज 'सम्यक्त्व' छे आ सम्यक्त्व आत्मानुज स्वरूप छे-आत्मानोज शुद्ध गुण छे-आत्मानुज परिणाम छे वळी आ सम्यक्त्व गुणनु फळ एवु महान छे के. सशय-विमोह-विभ्रम वगेरे ज्ञानना दोषो रूप दुष्ट अभिनिवेशथी रहित एवु जे सम्यग्ज्ञान यथार्थ विशुद्ध ज्ञान ते केवळ आ सम्यक्त्वना महिमाथी ज प्राप्त थाय छे जेम गौतम, अग्निभूति तथा वायुभूति नामना त्रण ब्राह्मणो, जेओ पाचसो पाचसो शिष्योना उपाध्याय हता अने चार वेद, ज्योतिष-व्याकरण वगेरे वेदना छ अगो, मनु वगेरे

अढार स्मृतिओ, पुराणो, महाभारतादि इतिहासो तथा मीमांसा न्याय वगेरे समग्र शास्त्रोने जाणनारा हता छतां प्रथम सम्यक्त्वना अभावे अज्ञानीज हता–मिथ्या ज्ञानीज हता, नहि के सम्यग्ज्ञानी ! परंतु ज्यारे ते ब्राह्मणो श्रीवर्धमान स्वामीने दर्शने गया अने तेमना दर्शनमात्रथी ज तेओनो मिथ्यात्व अंधकार दूर थयो तथा सम्यक्त्वगुण तेओने प्राप्त थयो त्यारे–तेज क्षणे तेओनुं पूर्वकाळनुं मिथ्याज्ञानज सम्यग्ज्ञानरूपे परिणम्युं. आवो सम्यक्त्वनो महिमा छे आ सम्यक्त्व विना अगीआर अंगोने जाणनारो हरकोइ मनुष्य खरेखर मिथ्याज्ञानीज छे वळी जेम सम्यक्त्वना महिमाथी मिथ्याज्ञान सम्यग्ज्ञान थइ शके छे तेम, तपश्चरण–व्रत–ध्यानादिक पण मिथ्यारूप होवा छतां सम्यक्त्वना महिमाथी शुद्ध स्वरूप थइ शके छे. जेम विषमिश्र दूध सर्वथा हेय छे तेम सम्यक्त्व विना सर्व क्रियाकलाप मिथ्यास्वरूप छे, हेय छे, माटे भव्य जीवे पचीस प्रकारना मळथी रहित एवो सम्यक्त्व गुण अवश्य उपादेय स्वरूपे जाणवो जोइए सम्यक्त्वना पचीस दोषो आ प्रमाणे कहेवामां आव्या छेः–

"मूढत्रय मदाश्चाष्टौ तथानायतनानि षट्॥
अष्टौ शंकादयश्चेति दृग्दोषाःपंचविंशतिः ॥१॥

त्रण प्रकारना मूढ, आठ प्रकारना मद, छ अनायतन अने शंका वगेरे आठ–आ पचीस सम्यक्त्वना दोषो छे. तेमां

त्रण मूढ आ प्रमाणे छेः—देवमूढ, लोकमूढ तथा शास्त्रमूढ जे सम्यक्त्वी जीव क्षेत्रपालादिनो महिमा जोइ पुत्रादि निमित्ते ते मिथ्यादेवनु आराधन करे ते देवमूढ छे, गगादि तीर्थमां स्नानादि कर्तव्यने पुण्यनु कारण मानी जे करे ते लोकमूढ छे, अने अज्ञानी मनुष्ये मानवा योग्य एवा ज्योतिष्क-मत्र वादादि जोइने जैन शास्त्रनो त्याग करी कुदेवभाषित शास्त्रोनो स्वीकार-भक्ति-आदर करे ते शास्त्रमूढ कहेवाय छे आठ प्रकारना मद तो प्रसिद्ध छे छ अनायतन आ प्रमाणे छेः— मिथ्यादेव, मिथ्या देवनो आराधक, मिथ्यातप, मिथ्यातपस्वी, मिथ्याशास्त्र अने मिथ्याशास्त्रपाठी—आ छनी जे प्रशसा ते छ प्रकारना अनायतन कहेवाय छे शकादि आठ दोषो तो प्रसिद्ध ज छे सम्यक्त्वना आ पचीस मेल सम्यक्त्वने मलिन करे छे माटे सम्यग्दृष्टिए ते मेलनो त्याग करवो ४१

सम्यग्ज्ञान स्वरूप कथन —

सूत्र—(गाथा)

ससयविमोहविब्भमविवज्जिअ अप्पसरूवस्स ॥
गहण सम्मण्णाण सायारमणेयभेय च ॥४२॥

अर्थ —सशय, विमोह अने विभ्रमथी रहित एवु आत्म-स्वरूपनु जे ग्रहण-ज्ञान ते सम्यग्ज्ञान छे जैन शास्त्रमा जीवादि पदार्थो कहेवामा आव्या छे ते सत्य हशे के असत्य? एवी जे अनिश्चित बुद्धि ते 'सशय' जाणवो परस्पर सापेक्ष-

एक एकनी अपेक्षा राखनार एवा जे वे नय ते द्वारा द्रव्य-गुण-पर्याय-नित्य-अनित्य-स्याद्वादरूप स्वरूप सामळी विशेष ज्ञानना अभावने लीधे जे मूढबुद्धि थाय छे ते 'विमोह' कहेवाय छे अने छीपना टुकडामा जेम रूपानी निश्चय बुद्धि थाय छे तेम, अनेकात वस्तुमा एकात बुद्धि एटले नित्यादि अनत धर्मात्मक वस्तुमा एकात क्षणविनाशीस्वरूप जे मिथ्या निश्चय बुद्धि ते विभ्रम कहेवाय छे आ सशय-विमोह-विभ्रमरूप मिथ्याज्ञानथी रहित जे आत्मस्वरूपनु ज्ञान ते सम्यग्ज्ञान कहेवाय छे. आ सम्यग्ज्ञान साकार छे-सविकल्प छे. जो के ज्ञान वस्तु निराकार छे-निर्विकल्प छे तो पण ज्ञान, ज्ञेयना आकाररूपे परिणमतु होवाथी अने सकल ज्ञेय वस्तुगत गुण पर्यायादि सहित जणातु होवाथी ज्ञान साकार छे, तेमज आ सम्यग्ज्ञानना मतिज्ञान वगेरे अनेक भेदो कहेवामा आव्या छे ४२

मम्यगदर्शन स्वरूप —

सूत्र—(गाथा)

ज सामन्नं गहण भावाण णेव कट्टुमायार ॥
अविसेसिऊण अट्ठे दसणमिदि भणए समए ॥४३॥

अर्थ'—वस्तुगत गुण-पर्यायरूप विकल्प-आकार कर्या विना एटले गुण पर्यायादि विकल्परहित केवळ शुद्ध सत्तामात्रे सर्व पदार्थोनु जे सामान्य ग्रहण-सामान्य ज्ञान तेने सिद्धातमा

दर्शन कहेवामा आवे छे आ दर्शन, पदार्थ मात्रने अविशेष स्वरूपे ग्रहण करे छे–एटले कोइ पण ज्ञेय वस्तुना श्वेतादि गुण के घट–पटादि आकृतिरूप जे पर्याय–विशेष ते विनाज सामान्य स्वरूपे ज्ञेयने ग्रहण करे छे माटे ते निराकार कहेवाय छे. अर्थात् सम्यग्ज्ञान ते साकार छे अने सम्यग्दर्शन ते निराकार छे. सारांश के, निर्विकल्पक–निराकारस्वरूप जे वस्तुदर्शन ते दर्शन छे अने सविकल्प–गुणपर्यायादि सहित जे वस्तुग्रहण ते ज्ञान छे ४३

हवे छद्मस्थने प्रथम दर्शन अने ते पछी ज्ञान थाय छे, पण केवलीने दर्शनोपयोग तथा ज्ञानोपयोग बन्ने समकाले एकी साथे थाय छे आवो आशयथी कहे छ —

सूत्र—(गाथा)

दसणपुव्व णाण छद्मस्थाण ण दोण्णि उवओगा ॥
जुगव जम्हा केवलि–णाहे जुगवं तु ते दोवि ॥४४॥

अर्थ —छद्मस्थ जीव, नेत्रादि इन्द्रियोद्वारा प्रथम वस्तुने देखे छे अने पछी ते वस्तुने जाणे छे माटेज छद्मस्थने दर्शनोपयोग तथा ज्ञानोपयोग–बन्ने साथे कदी होइ शके नहि, पण प्रथम दर्शन अने पछी ज्ञान थाय छे ज्ञानावरण तथा दर्शनावरणथी जे युक्त होय छे ते छद्मस्थ कहेवाय छे ते छद्मस्थने ज्ञान तथा दर्शन क्षायोपशमिक छे क्षायोपशमिक एटले आवरणना कइक क्षय पछी बीजा जीव-

प्रदेशने संबंध पामे अने आवरणरूप पुद्गलना उपशमथी किंचित्मात्र ज्ञानदर्शन गुणनु मेघमंडळथी आवरित सूर्यप्रभानी पेठे जे बहार नीकळवु ते पण आवरणना सर्वथा समूळ क्षयथी ज्ञानदर्शननी जे स्वाधीनता ते क्षायिक कहेवाय छे. आ क्षायिक ज्ञानदर्शनना अभावथी छद्मस्थने वस्तुनु दर्शन तथा वस्तुनु ज्ञान एकी साथे थता नथी पण अनुक्रमे थाय छे, त्यारे केवलीनाथ-केवळ ज्ञानीने ते दर्शनोपयोग तथा ज्ञानोपयोग बन्ने एकी साथे होय छे केमके केवलीना ज्ञानदर्शन क्षायिक छे अने तेथीज तेमने ज्ञान तथा दर्शन समकाळे होय छे ४४

हवे शुद्धोपयोगरूप वीतराग चारित्रनु परपराए साधक सरागचारित्र कहे छे—

सूत्र—(गाथा)

असुहादो विणिवित्ती सुहे पवित्ती य जाण चारित्तं ॥
वदसमिदिगुत्तिरूवं ववहारणया दु जिणभणिय ॥४५

अर्थ—अशुभ विषयक कषाय-दुश्चेष्टारूप अशुभ उपयोगथी निवृत्त थवु-दूर रहेवु-अटकवु अने शुभ उपयोगरूप सराग चारित्रमा जे प्रवृत्ति करवी-उपादेय बुद्धि करवी तेने चारित्र जाणवु व्यवहार नये देशव्रत, सर्वव्रत, पाच समिती अने त्रण गुप्ति-ते आ चारित्रनु स्वरूप छे अने ते जिन भगवाने कहेलु छे ४५

सरागचारित्रसाध्य वीतराग चारित्रनु स्वरूप—

सूत्र—(गाथा)

वहिरब्भिंतर किरियारोहो भवकारणप्पणासट्ठ ॥
णाणिस्सज जिणुत्त त परम शुद्धचारित्त ॥४६॥

अर्थ —ससारना कारणरूप विभाव परिणाम राग-द्वेष मोहनो विनाश करवा माटे शुभाशुभ कायव्यापार तथा शुभाशुभ वचनव्यापाररूप बाह्य क्रियानो अने मनोनिरूपरूप आभ्यतर क्रियानो जे रोध-सयम ते जिनभाषित वीतराग चारित्र छे आ चारित्रनेज शुद्धोपयोगरूप सम्यक्चारित्र कहे छे ४६

ए रीते आ गाथाओथी रत्नत्रयरूप मोक्षमार्ग कह्यो, हवे चार गाथाओथी ध्याता, ध्यान तथा ध्येयनु स्वरूप कहे छे तमा प्रथम ध्यानफलकथन—

सूत्र—(गाथा)

दुविह विमुरकहेउ झाणे पाउणदि ज मुणी णियमा॥
तम्हा पयत्तचित्ता जूय झाण समज्झसह ॥४७॥

अर्थ —व्यवहार तथा निश्चय-ए बन्ने प्रकारे मोक्षनु कारण एवा रत्नत्रयने मुनि, पोताना ध्यानवळथी अवश्य प्राप्त करी शके छे, माटे हे भव्य जीवो? मनने एकाग्र करी-वश करी, तमे ध्याननो अभ्यास करो ४७

ध्याता लक्षण —

सूत्र—(गाथा)

मा मुज्झह मा रज्झह मा दूसह इट्ठणिट्ठ अत्थेसु ॥
थिरमिच्छह जइ चित्त विचित्त झाणप्पसिद्धीए ॥४८॥

अर्थ —जो तमारे विचित्र–अनेक प्रकारना ध्याननी सिद्धि प्राप्त करवी होय–मनने ध्याननिष्ठ करवु होय अने सर्व प्रकारे मनने स्थिर करवु होय तो कोइ पण इष्ट–अनिष्ट अर्थो विषयोमा तमे मोह न करो, राग न करो अने द्वेष न करो भाव ए छे के, इष्ट के अनिष्ट कोइ पण विषयमा मोहबुद्धि एटले भ्रांतिभावनो त्याग करवो जोइए, रागबुद्धि एटले उपादेय बुद्धिनो त्याग करवो जोइए तथा द्वेपबुद्धि एटले हेयबुद्धिनो पण त्याग करवो जोइए, अर्थात् ध्याता पुरुषे इष्ट अनिष्ट वस्तु तरफ राग–मोह–द्वेषनो त्याग करी केवळ उदासीन रहेवु जोइए, जेथी मन स्थिर थाय छे अने ते द्वारा ध्याननी सिद्धि थता परम निर्विकल्प समाधिनु सुख प्राप्त थाय छे. ४८

पदस्थ–पिंडस्थ–रूपस्थ–स्वरूपातीत–ए चार प्रकारना ध्याननु स्वरूप कहे छे, तेमा प्रथम पदस्थ ध्यान —

सूत्र—(गाथा)

पणतीससोलछप्पण-चउदुगमेगं च जवह ज्झाएह॥
परमेट्ठिवाचयाणं अण्ण च गुरूवएसेण ॥४९॥

अर्थः—'नमो अरिहंताण' थी 'सव्वसाहूण' त्या सुधीनो पात्रीस अक्षरनो जाप, नमोऽर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुभ्य' ए सोळ अक्षरनो जाप, 'अरिहतसिद्ध' ए छ अक्षरनो जाप, 'असिआउसा' ए पाच अक्षरनो जाप, 'अरिहत' ए चार अक्षरनो जाप, 'सिद्ध' ए बे अक्षरनो जाप तथा 'ॐ' ए एक अक्षरनो जाप—आ सर्व परमेष्ठिनाज वाचक पद छे माटे हे आत्मन्! एमानु कोईपण पद लई तु पदस्थ ध्यान कर, अथवा बीजु जे कई गुरना उपदेशथी तने प्राप्त थाय ते सर्व परमेष्ठि वाचक पदोनु यथाविधि तु ध्यान कर ४९

अरिहतादि पच परमेष्ठिनु ध्यान करवा योग्य स्वरूप —

सूत्र—(गाथा)

णट्ठचउघाइकम्मो दसणसुहणाणवीरियमओ य॥
सुहदेहत्थो अप्पा सुद्धो अरिहो विचितेज्जो ॥५०॥

अर्थ'—जेना चार प्रकारना घातिकर्मो मूळथी नाश पाम्या छे अने ते घातिकर्मना क्षयथी अनतदर्शन, अनतसुख, अनतज्ञान तथा अनत वीर्यमयपणाने जे पामेल छे ते शुभ देह औदारिक शरीरमा रहेलो अरिहत आत्मा शुद्ध छे—निष्कलक छे, अर्थात् क्षुधा–तृषा–भय–राग–द्वेष–मोह–चिंता हास्य–रोग–मृत्यु–शोक–खेद–मद–अरति–विस्मय–जन्म–निद्रा–विषाद–ए अढार दोषोथी रहित छे आ शुद्ध अरिहत परमात्मानु ध्यान करवु. ५०

सिद्ध परमेष्ठिनु ध्येय स्वरूप—

सूत्र—(गाथा)

णट्ठकम्मदेहो लोयालोयस्स जाणओ दट्ठा ॥
पुरिसायारो अप्पा सिद्धो झाएह लोयसिहरत्थो ॥५१

अर्थ.—विभावपरिणति एवा भाव कर्मरूप कारणना अभावथी जेना ज्ञानावरणादि आठ कर्मो तथा औदारिक शरीरादि रूपकर्मो नाश पाम्या छे ते सिद्धरूप आत्मानु ध्यान करवु, भाव ए छे के, शुद्धोपयोगना महिमाथी आठ कर्मो तथा शरीरनी उपाधिथी रहित एवु अतींद्रिय ज्ञानसुख प्राप्त थाय छे. वळी ते सिद्धात्मा लोकालोकरूप समग्र ज्ञेय वस्तुने पोतानी ज्ञानशक्तिथी जाणी शके छे, दर्शनशक्तिथी सर्वनो द्रष्टा–दर्शन करनार बने छे, अने पुरुष आकृतिए परिणमे छे जो के निश्चय दृष्टिए सिद्धात्मा अमूर्त छे–निराकार छे–निरजन छे तो पण व्यवहारदृष्टिए चरम शरीरथी कइक ओछो पुरुषाकारे परिणमे छे. आ सिद्धात्मा, लोकशिखर–सिद्ध शिलानी उपर एक योजनना चोवीसमा भागमा लोकनी अते स्थिति करी रह्यो छे ५१

आचार्य-परमेष्ठिनु ध्येय स्वरूप—

सूत्र—(गाथा)

दंसणणाणप्पहाणे वीरियचारित्तवरतवायारे ॥
अप्प परं च झुजइ सो आयरिओ

अर्थ —जे आचार्य निःशंकितादि आठ प्रकारना दर्शनाचारमां, कालाध्ययनादि आठ प्रकारना ज्ञानाचारमां, मनोगुप्त्यादि शक्ति विशेषरूप त्रण वीर्याचारमां, त्रण गुप्ति तथा पांच समितिरूप आठ प्रकारना चारित्राचारमां अने अनशनादि छ प्रकारना बाह्य तपाचारमां तथा प्रायश्चित्तादि छ आभ्यंतर तपाचारमां–एम पांच प्रकारना आचारमां पोताने तथा बीजाने योजे छे–पोते शुद्ध स्वरूपे पांचे आचारोनुं पालन करे छे, तथा बीजाने पळावे छे तेवा आचार्य परमेष्ठिनुं ध्यान करवुं. ५२

उपाध्याय परमेष्ठिनुं ध्येयस्वरूप—

सूत्र—(गाथा)

जो रयणत्तयजुत्तो णिच्च धम्मोवदेसणे णिरदो ॥
सो उज्झाओ अप्पा जदिवरवसहो णमो तस्स ॥५३॥

अर्थ—जे उपाध्यायरूप आत्मा ज्ञान–दर्शन–चारित्र ए त्रण रत्नोथी युक्त छे, षट् द्रव्य–पंचास्तिकाय–सप्ततत्त्व–नव पदार्थरूप धर्मनो उपदेश करवामां नित्य आसक्त छे अथवा 'केवळ आत्मा उपादेय छे अन्य सर्व हेय छे' इत्यादि निश्चय धर्मनो नित्य उपदेश करे छे अथवा क्षमादि दश प्रकारना यति धर्मनो तथा दर्शनविशुद्धि आदि ११ प्रतिमारूप गृहस्थ धर्मनो व्यवहारथी उपादेय स्वरूपे नित्य उपदेश करे छे अने पंचेन्द्रियने जितनारा सर्व श्रेष्ठ यतिओ–साधुओमां श्रेष्ठ छे ते

उपाध्याय आत्माने नमस्कार, अर्थात् आवा प्रकारना उपाध्यायनु ध्यान करवु ५३

साधु परमेष्ठिनु ध्येयस्वरूप —

सूत्र—(गाथा)

दंसणणाणसमग्गं मग्गं मोक्खस्स जो हु चारित्तं ॥
साधयदि णिच्चसुद्धं साहू स मुणी णमो तस्स ॥५४॥

अर्थ —तत्वने जाणनार जे साधु, सम्यग्दर्शन तथा सम्यग्ज्ञानसहित एवु अने मोक्षना मार्गरूप एवु शुद्ध चारित्र नित्य साधे छे तेमने नमस्कार हो. आवा चारित्र्यनिष्ठ साधु ध्यान करवा योग्य छे. ५४

ए रीते पंच परमेष्ठिना व्यवहार दृष्टिए ध्येयस्वरूप कह्या हवे निश्चयदृष्टिए ध्यान कहेवामा आवे छे —

सूत्र—(गाथा)

जं किंचि विचिंततो णिरीहवित्ती हवे जदा साहू ॥
लद्धूणय एयत्तं तदा हु तं तस्स णिच्छयं झाणं ॥५५॥

अर्थ —ज्यारे कोइ ध्याता साधु, हरकोइ पदार्थने केवळ शुद्धात्मास्वरूप चिंतवे छे- ध्यावे छे अने निरीहवृत्ति बने छे–समग्र वांछा–विकल्पथी रहित होइ–समग्र बाह्य आभ्यतर ग्रंथिओथी मुक्त थाय छे–केवळ उदासीन स्वरूप बनी रहे छे, तेमज परम एकत्व भाव–अद्वैतभावने पामी द्विधा भावथी रहित थइ निर्विकार स्वरूप थाय छे त्यारे ते मुनी

श्वरने निर्विकल्प समाधि सुखना समुद्रसमान निश्चय ध्यान थयु छे एम समजवु, अर्थात् निर्विकल्प सामाधिरूप परम समाधिना परम सुखमा जे निमग्नता ते निश्चय ध्यान छे. ५५

शुभाशुभ मन वचन-कायाना व्यापारनो निरोध करवाथी आत्माने विशुध्ध परिणतिमां स्थि रता प्राप्त थाय छे अने ते द्वाराज ध्याता पुरुषने निश्चयध्यान प्रकटे छे, एवा आशयथी कहे छे —

सूत्र—(गाथा)

मा चिट्ठह मा जपह मा चिंतह किंपि जेण होइ थिरो।
अप्पा अप्पमि रओ इणमेव पर हवे झाण ॥५६॥

अर्थ —हे आत्मन्! शुभाशुभ चेष्टारूप कायव्यापारमा तु स्थिति न कर. हे भव्य जीव! शुभाशुभ अतर्जल्प तथा बहिर्जल्परूप वचन व्यापारने तु न कर अने शुभाशुभ विकल्परूप मनोव्यापारने पण तु न कर, जेथी–एटले शुभाशुभ कायव्यापार, वचनव्यापार तथा मनोव्यापारना परित्यागथी परमस्थिर भावने तु पामी शकीश निश्चल परिणामरूप समाधि सुखना अनुभवने अनुभवी शकीश केमके मन-वचन-कायाना व्यापारनो निरोध करवाथी आत्मा, पोताना शुद्धात्मस्वरूपमा रमण करे छे-मग्न बने छे. शुद्धात्मस्वरूपमा जे आ लीनता तेज परम निर्विकार एवु निश्चय ध्यान छे एम समजवुं. ५६

हवे ध्याता पुरुषने तप श्रुत-व्रतरूप ध्यान सामग्रीनो व्यवहार अवश्य उपादेय छे ए वातने दृढ करे छे -

सूत्र--(गाथा)

तवसुदवदवं चेदा झाणरहधुरंधरो हवे जम्हा ॥
तम्हा तत्तियणिरदा तल्लद्धीए सदा होह ॥५७॥

अर्थः—हरकोइ आत्मा, बाह्य आभ्यंतर भेदथी बार प्रकारना व्यवहार तपवडे तथा ए व्यवहार तपथी साध्य इच्छानिरोधरूप निश्चय तपवडे जो युक्त होय छे, तेमज आचारांग आदि द्रव्य श्रुतथी तथा आत्मज्ञानरूप भाव श्रुतथी जो युक्त होय छे अने पंचमहाव्रतादि द्रव्यव्रतथी तथा भाव व्रतथी जो युक्त होय छे तोज ध्यानरूप रथनी धुरा वहवाने समर्थ थइ शके छे-तोज ध्यानमां एकाग्र तथा एकनिष्ठ थइ शके छे, माटे ए ध्याननी लब्धि-प्राप्ति माटे सदा सर्वकाळ तप, श्रुत तथा व्रतमांज आसक्त रहेवुं जोइए, भाव ए छे के जो शुद्ध ध्यानसंपादन करवानी अभिलाषा होय तो तप-श्रुत-व्रत ए त्रणमां तल्लीन थवुं जोइशे-ते तरफ संपूर्ण प्रेम करवो जोइशे-ए त्रणेने उपादेय तरीके अवश्य स्वीकारवा पडशेज दाखला तरीके, भरत चक्रवर्ती महाराजा फक्त बे घडीमांज मोक्षे गया ए प्रभाव पण विषयकषायनिवृत्तिरूप क्षणमात्र-स्थायी व्रतनोज तेमणे व्रतपरिणाम ग्रहण करी जिनदीक्षा स्वीकारीने लोच कर्यो के तुरतज मुक्तिपद प्राप्त थयुं, आवो

तप-श्रुत-व्रतनो महिमा छे. माटे ध्याता पुरुषे ध्यानसामग्री तरीके तप, श्रुत तथा व्रतनो अवश्य स्वीकार करवो ५७

छेवटे ग्रथकर्ता पोतानी लघुता-निरभिमानिता दर्शावे छे —

सूत्र—(गाथा)

दव्वसंगहमिण मुणिणाहा॥
दोससंसयचुदा सुयपुण्णा॥
सोधयंतु तणुसुत्तधरेण॥
णेमिचंदमुणिणा भणियं जं॥५८॥

अर्थ -जे आ द्रव्यसग्रह ग्रथ, अल्प श्रुतधर अल्प मात्र श्रुतने धारण करनारा मुनि नेमिचंद्रे कह्यो छे-रच्यो छे तेने राग-द्वेष-मोह-ए दोषोथी तथा संशयादि मिथ्या ज्ञानथी रहित एवा श्रुतपूर्ण-श्रुतज्ञान पूर्ण मुनिनाथो-मुनीश्वरो शोधी लेजो-आ ग्रन्थमा जे कोइस्थळे विरुद्ध शब्द के विरुद्ध शब्दार्थ मूकी देवायो होय ते बदल योग्य शब्द के योग्य शब्दार्थ मूकीने सुधारी लेजो ५८

इति श्री द्रव्यसग्रह ग्रथमा "मोक्षमार्ग प्रतिपादक" ए नामनो अध्याय ३ त्रीजो समाप्त



शुद्धिपत्र

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
करत्रा	करवा	१०	१७
गुठाणामा	गुणठाणामा	१७	१८
जन्द	शब्द	१९	१५
ग्यून	सून	२२	२
तेओना	तेओनी	२३	१३
आ लोकाकाश	आ अलोकाकाश	२६	१
होयो	होवु	३१	१०
करत	करता	३२	११
परमाणु	परमाणु	३८	७
मृपावाद	मृपावाद	३९	१३
जेना	जेवा	"	१४
भावाश्रवना	भावाश्रवना	"	१७
इयरा	इयरो	४०	१४
प्रदेशवन्ध	प्रदेशबन्ध	४२	१२
हेउ	हेऊ	"	१८
६४	३८	४३	१३
भावस्वर	भावसवर	४४	१०
भावसंवर	भावसवर	"	१३
जीव	जीव	"	१८

तप–

	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ
तरीके			
छेयर	बैपट	बापट	५८
	पूरणमाद	पूरणमा	५९
	पुण्य	पुण्य	,,
		,	,,
	[illegible]	[illegible]	६०
	रना	रनो	६१
	मामाना	मॉमाना	६३
	[illegible]	[illegible]	,,
	दाना	दोना	
	भमा। मव	समामव	६४
धारण	मागमाग	मोगमाग	६०
द्वेप–	अनिष्ठ	अनिष्ट	६८
एवा	[illegible]	[illegible]	६०
आ ३	दाना	यारा	६०
देवार			६०
सुधा			

